Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रावक साधू स्वाध्याय

प्रवचन सार
प्रवचन मन्दिर

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

निशुल्क सप्रेम भेंट
श्री दिगम्बर जैन मन्दिर जी

... प्रसाद जैन, सर्राफ
... चाँदनी चौक, दिल्ली-110006

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

प्रवचनसार

प्रवचन-मन्दिर

प्रेरणा-स्रोत

आचार्य श्री 108 सुमतिसागर जी महाराज

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

प्रवचनसार

प्रवचन-मन्दिर

प्रेरणा-स्रोत :

आचार्य श्री 108 सुमतिसागर जी महाराज
(श्री 108 चारित्रचक्रवर्ती तपोनिधि
विमलसागर जी महाराज के पट्टशिष्य)

अर्थ-सौजन्य :

लाला कपूरचन्द जैन एण्ड संस,
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

एवं

श्रीमती मंजुरानी जैन
(धर्मपत्नी श्री सुरेन्द्रकुमार जैन)
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

मुद्रक : पारस प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

आचार्य श्री 108 सुमतिसागर जी महाराज

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

संघ
आचार्य श्री 108 सुमतिसागर जी महाराज

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्री सम्मेदशिखर कूट-पूजन (नमस्कार)

एकबार बन्दे जो कोई।
ताहि नरक पशुगति नहिं होई॥

॥ दोहा ॥

(1)

॥ ज्ञानधर-कूट ॥

कुन्थनाथ जिनराज का, कूट ज्ञानधर जेह।
मन-वच-तन कर पूजहुं, शिखर सम्मेद यजेह ॥1॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 96 कोड़ा-कोड़ी 96 करोड़ 32 लाख 96 हजार 742 मुनि इस कूट से सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है।

(2)

॥ चौबीस तीर्थंकरों के गणधरों की कूट ॥

चौबीसों जिनराज के, गण नायक हैं जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ॥2॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

ॐ ह्रीं श्री गौतम स्वामी आदि गणधर देव ग्राम के उद्यान आदि भिन्न-भिन्न स्थानों से निर्वाण पधारे हैं, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

(3)

।। मित्रधर कूट ।।

नमिनाथ जिनराज का, कूट मित्रधर जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ।।3।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 9 सौ कोड़ा-कोड़ी 1 अरब 45 लाख 7 हजार 942 मुनि इस कूट से सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है।

(4)

।। नाटक कूट ।।

अरहनाथ जिनराज का, नाटक कूट है जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ।।4।।

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 99 करोड़ 99 लाख 999 हजार मुनि (1 कम 1 अरब मुनि) इस कूट से सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से 96 करोड़ उपवास का फल होता है ।।4।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(5)

।। संवल-कूट ।।

मल्लिनाथ जिनराज का, संवल कूट है जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ।।5।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्रादि 96 करोड़ मुनि इस कूट से सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से एक करोड़ प्रोषध उपवास का फल होता है।

(6)

।। संकुल-कूट ।।

श्रेयांसनाथ जिनराज का, संकुल कूट है जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ।।6।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 96 करोड़ 96 लाख 9 हजार 542 मुनि इस कूट से सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना (नमस्कार) करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है।

(7)

।। सुप्रभ-कूट ।।

पुष्पदन्त जिनराज का, सुप्रभ कूट है जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ।।7।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्त जिनेन्द्रादि मुनि 1 कोड़ा-कोड़ी 99 लाख 7 हजार 480 मुनि इस कूट से सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है।

(8)

॥ मोहन-कूट ॥

पदमप्रभु जिनराज का, मोहन कूट है जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ॥8॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्रादि मुनि 99 करोड़ 87 लाख 43 हजार 727 मुनि इस कूट से सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस कूट की भाव सहित वन्दना करने पर एक करोड़ उपवास का फल होता है।

(9)

॥ निरजर-कूट ॥

मुनि सुव्रत जिनराज का, निरजर कूट है जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 99 कोड़ा-कोड़ी 99 करोड़ 9 लाख 999 मुनि इस कूट से सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(10)

।। ललित-कूट ।।

चन्द्रप्रभु जिनराज का, ललित कूट है जेह ।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ।।10।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्रादिमुनि 984 अरब 72 करोड़ 80 लाख 84 हजार 595 मुनि इस कूट से सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से 96 लाख उपवास का फल होता है।

(11)

।। आदिनाथ भगवान को टोंक ।।

ऋषभ देव जिन सिद्ध भए, गिरि कैलाश से जोय ।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर नमूं पद दोय ।।11।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्रादि 10 हजार मुनि कैलाश पर्वत से मोक्ष गये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

(12)

।। विद्युत-वर-कूट ।।

शीतलनाथ जिनराज का, कूट विद्युत वर जेह ।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ।।12।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 18 कोड़ा-कोड़ी 42 करोड़ 32 लाख 42 हजार 905 मुनि इस कूट से सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है।

(13)

॥ स्वयंप्रभु-कूट ॥

अनन्तनाथ जिनराज का, कूट स्वयंभूवर जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ॥13॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 96 कोड़ा-कोड़ी 70 करोड़ 70 लाख 70 हजार 700 मुनि इस कूट से सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से वारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से 9 करोड़ उपवास का फल होता है।

(14)

॥ धवल-कूट ॥

सम्भवनाथ जिनराज का, धवल कूट धर जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं शिखर सम्मेद यजेह ॥14॥

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 9 कोड़ा-कोड़ी 72 लाख 42 हजार 500 मुनि इस टोंक से सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से 42 लाख उपवास का फल होता है।

(15)

॥ वासुपूज्य भगवान की टोंक ॥

वासुपूज्य जिन सिद्ध भये, चम्पापुर से जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ॥15॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्रादि चम्पापुर-मंदारगिरि से एक हजार मुनि सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

(16)

॥ आनन्द-कूट ॥

अभिनन्दन जिनराज का, आनन्द कूट है जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ॥16॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दन जिनेन्द्रादि मुनि 72 कोड़ा-कोड़ी 70 करोड़ 70 लाख 42 हजार 700 मुनि इस कूट से सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से एक लाख उपवास का फल होता है।

(17)

॥ सुदत्तवर-कूट ॥

धर्मनाथ जिनराज का, कूट सुदत्तवर जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ॥17॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 29 कोड़ा-कोड़ी 19 करोड़ 9 लाख 9 हजार 795 मुनि सिद्ध भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है।

(18)

॥ अविचल-कूट ॥

सुमतिनाथ जिनराज का, अविचल कूट है जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ॥18॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि एक कोड़ा-कोड़ी 84 करोड़ 72 लाख 81 हजार 781 मुनि इस टोंक से मोक्ष पधारे, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना-नमस्कार करने से 9 करोड़ 32 लाख उपवास का फल होता है।

(19)

॥ कुन्दप्रभु-कूट (शान्तिनाथ-कूट) ॥

शान्तिराथ जिनराज का, कुन्द कूट है जेह।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ॥19॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 9 कोड़ा-कोड़ी 9 लाख 9 हजार 999 मुनि इस कूट से मोक्ष भये, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से नमस्कार हो।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है।

(20)

।। श्री महावीर भगवान का टोंक ।।

महावीर जिन सिद्ध भये, पावापुर से जोय।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर नमूं पद दोय ।।20।।

ॐ ह्रीं श्री महावीर स्वामी पावापुर के पद्म सरोवर स्थान से 26 मुनि मोक्ष पधारे, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

(21)

।। प्रभास-कूट ।।

सुपार्श्वनाथ जिनराज का, प्रभास कूट है जेह ।
मन-वच-कर तन पूजहुं, शिखर सम्मेद यजेह ।।21।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 49 कोड़ा-कोड़ी 84 करोड़ 72 लाख 7 हजार 742 मुनि इस कूट से मोक्ष पधारे, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से 32 करोड़ उपवास का फल होता है।

(22)

।। सुवीर-कूट (संकुल-कूट)

विमलनाथ जिनराज का, कूट सुवीर है जेह ।
मन-वच-तन कर नमहुं, शिखर सम्मेद यजेह ।।22।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्रादि मुनि 70 कोड़ा-कोड़ी 60 लाख 6 हजार 742 मुनि इस कूट से शिवपुर पधारे, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से विनयपूर्वक बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है।

(23)

॥ सिद्धवर-कूट ॥

अजितनाथ जिनराज का, सिद्धवर कूट है जेह।
मन-वच-तन कर पूजहुं, शिखर सम्मेद यजेह ॥23॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्रादि मुनि एक अरब 80 करोड़ 54 लाख मुनि इस कूट से निर्वाण पधारे, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वन्दना करने से 32 करोड़ उपवास का फल होता है।

(24)

॥ नेमिनाथ भगवान की टोंक ॥

नेमिनाथ जिन सिद्ध भये, सिद्ध क्षेत्र गिरनार।
मन-वच-तन कर नमहुं, भवोदधि पार उतार ॥24॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्रादि शम्भू, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध इत्यादि 72 करोड़ 7 सौ मुनि गिरनार पर्वत से मोक्ष गये, सिद्धक्षेत्रेभ्यो तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से सविनयपूर्वक बारम्बार नमस्कार हो।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(25)

।। स्वर्णभद्र-कूट ।।

पार्श्वनाथ जिनराज का, स्वर्णभद्र है कूट ।
मन-वच-तन कर नमहुं, जाऊं करम से छूट ।।25।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि 82 करोड़ 84 लाख 45 हजार 742 मुनि इस परम पुनीत कूट से मोक्ष पधारे, तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से विनयपूर्वक बारम्बार नमस्कार हो ।

एक बार इस कूट का शुद्ध भाव से ध्यान व दर्शन करने से पशु-गति से छुटकारा हो जाता है और 16 करोड़ उपवास का फल एक बार की वन्दना से होता है ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्री १०८ मुनि सुमति सागर जी महाराज का जीवन-परिचय

विदित हो कि आपका गृहस्थ जीवन का नाम नत्थीलाल जी था। आपके पूज्य पिताजी का नाम छिद्दूलाल जी व माता जी का नाम श्रीमती चिरोंजा देवी था। आप अपने परिवार में चार सगे भाई तथा एक बहन हैं। भाई झुन्नीलाल, बाबूलाल, रामस्वरूप तथा कलावती बहन का नाम है। आपकी धर्मपत्नी का नाम रामश्री देवी है। आपके दो पुत्र—बारेलाल, भागचन्द व एक पुत्री—कपूरी बाई का विवाह हो चुका है। आपका गोत्र भंडारी है। आपका जन्म शुभ मिति असोज सुदी 4 वि० सं० 1974 में ग्राम श्यामपुरा, परगना अम्बहा (जिला मुरैना) में हुआ था। आपने भरे-पूरे परिवार को परित्याग कर दिगम्बरी दीक्षा धारण की।

आपकी बाल्यकाल से ही धर्म में लगन थी। आप काश्तकारी आढ़त तथा घी का अच्छा मध्यम व्यापार करते थे। आपका विवाह वि० सं० 1986 में हुआ था और विवाह के थोड़े दिन बाद ही आपको रामदुलारे डाकू हरण कर ले गया था। 14 दिन के बाद आप गिरोह से भाग आये। आप सं० 2010 वि० में गांव से मुरैना आकर रहने लगे और दुकानदारी का कार्य करते रहे।

पुण्योदय से श्री 108 आचार्य विमलसागर जी महाराज संघ सहित मुरैना में पधारे। उसी समय आपकी धर्मपत्नी ने आपसे पूछा कि आचार्यश्री को आहार देने की मेरी इच्छा है। अगर आप आज्ञा दें तो मैं शूद्र जल का त्याग ले लूं और आप भी ले लीजिए।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तब आप (नत्थीलाल) ने कहा—आपसे बने तो आहार दो, हमसे तो कुछ नहीं बनता। तब आपकी धर्मपत्नी ने शूद्र जल का त्याग कर दिया और ज्ञानबाई के साथ आहार दिया। फिर आपकी धर्मपत्नी ने कहा—अब हम अपने मकान पर आहार बनायेंगे। आप महाराज को ले तो आयेंगे ? तब दूसरे दिन घर पर आहार बनाया व आप महाराज को लेकर अपने घर आ गये और खड़े रहे, महाराज भी खड़े रहे। महाराज की निगाह आप पर पड़ी तो आपने कहा—महाराज मुझसे त्याग नहीं बनेगा तब महाराज लौटने लगे। तब आपने सोचा कि मेरे घर से महाराज बिना आहार लिये लौट गए। तो मेरा जैन कुल में उत्पन्न होना ही बेकार है। फिर क्या था, उसी समय आपके भाव जागे और उसी समय आपने शूद्र जल का त्याग किया व आचार्यश्री को आहार दिया।

आहार देने के बाद भावना हुई कि अब और त्याग करते जायेंगे। फिर पं० मक्खनलाल जी की संगति में रहने लगे व शास्त्र अध्ययन करते रहे। सं० 2021 में श्री 108 शान्तिसागर जी महाराज से दूसरी प्रतिमा धारण की व वि० सं० 2023 में एक मकान खरीदा और इसी वर्ष मुरैना में गजरथ पंचकल्याणक महोत्सव हुआ। इस अवसर पर श्री 108 विमल सागर जी महाराज पधारे। इनसे आपने सातवीं प्रतिमा ली और इसी तरह आप त्याग की ओर बढ़ते गए।

संसार को अथिर जानकर आपने मन में मुनि दीक्षा लेने की धारणा बना ली। सं० 2024 में फागुन सुदी 12 को सोनागिरि गये। वहां श्री 108 मुनि निर्मलसागर जी से मुनि दीक्षा लेने का विचार किया मगर 108 मुनि विमलसागर जी की आज्ञा न पाकर बाद में रेवाड़ी पहुंचे। वहां पर श्री 108 मुनि विमल-सागर जी महाराज से चैत सुदी 13 वि० सं० 2025 को ऐलक

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

दीक्षा ली और आपका श्री 105 वीर सागर नामकरण हुआ। वहां से विहार करके श्री गुरु जी के साथ देहली पधारे। वहां पर चातुर्मास किया। इसी अवसर पर सर्वप्रथम सावन सुदी 11 को केशलोंच के समय आप बड़े शान्त-चित्त दिखलाई दे रहे थे। थोड़ी देर में आपने केशलोंच कर डाला। उस समय आपकी जय-जयकार से आकाश गूंज उठा। चातुर्मास के बाद संघ के साथ-साथ आप गाजियाबाद पधारे। अगहन बदी 12 वि० सं० 2025 को दूसरा केशलोंच हुआ। उसी समय श्री गुरु जी से मुनि दीक्षा हेतु प्रार्थना की और उसी समय श्री 108 मुनि विमलसागर जी महाराज ने मुनि दीक्षा दे दी। फिर आपका दीक्षित नाम श्री 108 मुनि सुमतिसागर जी महाराज रखा गया।

धन्य है आपकी पौरुषता को कि चन्द दिनों में ही आपने सर्व परिग्रह और भरा-पूरा परिवार छोड़कर निरग्रन्थ मुनिपद प्राप्त कर लिया। इसमें समाज भी धन्य हुआ और अपने परिवार का नाम उज्ज्वल किया।

आपकी विशेषताएं व धर्म का फल

आप 6 साल पहले श्री सम्मेद शिखर जी की वन्दना के लिए गए थे। सो पहाड़ पर श्री पार्श्वनाथ के मन्दिर में आपने ब्रह्मचर्य व्रत लिया था और आपकी पत्नी ने ब्रह्मचर्य व्रत लिया था। और आपने प्रतिज्ञा की थी कि भगवान, मैं पैदल आकर श्री सम्मेद शिखर जी की वन्दना करूंगा। सो अब आप पैदल शिखर जी की वन्दना करने जा रहे हैं। 18 साल उम्र में बीमारी हुई थी।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

उपसर्ग व धर्म-प्रभावना

1. नदी चम्बल में आप डूबने से बच गए व साथ की दोवाई डूबकर मर गई। उसी साल में शादी हुई थी।
2. डाकुओं के साथ आप डाकुओं के घेरे में थे। जब पुलिस से गोली चली, आपके चरणों में गोली आते ही ठण्डी पड़ जाती थी। डाकू पकड़ ले गये थे, 12 साल के थे।
3. चोरों ने जंगल में घेर लिया, मारने को थे इतने में पुलिस मिलिट्री आ गई और चोर पकड़ लिये गए पर आपने चोरों को सजा न होने दी।
4. बाराबंकी में चातुर्मास किया। वहां से सम्मेद शिखर की वंदना करते हुए कोडरमा में प्रभावना हुई। जनता ने इसका लाभ उठाया।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

स्वामी श्री 108 गुरु विमलसागर जी महाराज के पट्टशिष्य

जैन साधु का चमत्कार

जिला इटावा, पोस्ट अजीतमल, मु० बाबरपुर में एक उदासीन स्थान श्री ब्रह्मचारी जैकिशुनदास ने बनवाया है। उसमें भाग्य से श्री 108 ज्ञानसागर मुनि और गुरु 108 श्री सुमतिसागर जी महाराज युगल पधारे। उसी समय चार महीने पहले से बच्चन कौम कलाकार पागल था जिसका अंग-भंग हो रहा था, बदन में कांटे कंकड़ चुभ रहे थे, भौंहें चढ़ रही थीं, बदन जख्मी हो रहा था। युगल गुरु के आने पर नगरी में शोहरत हो गई। जैन, अजैन सभी नर-नारी आत्मलाभ लेने को आ रहे थे। उस कलाकार के भाई दो या तीन जने बड़ी मुश्किल से गुरु के पास उसे लाये। आते ही श्री 108 सुमतिसागर जी ने कहा—कहो क्या हालत है? उत्तर नहीं दे सका। दयालु गुरु ने अपने कमण्डल से जल लेकर और मन्त्र पढ़कर कलाकार के ऊपर छिड़क दिया और कहा—जाओ, कल्याण होगा। सो पांच दिन में तो पागलपन नष्ट हो गया। फिर नौ दिन में जख्म ठीक हो गए। कुल 14 दिन के बाद घर का सारा कारोबार सम्भालने लगा हैं।

एक खटिक (बकरकसाई) बकरी व बकरे मारने का काम करता था। एक दिन वह महाराज के दर्शन को आ गया। पूछने पर पता लगा कि यह बकरा मारता है, तो महाराज नें उसे अहिंसा का उपदेश दिया। उससे बकरी मारने का काम छुड़ा दिया।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

उसने नियम बना लिया कि मैं यह काम अब नहीं करूंगा और उसने बकरकसाई का काम छोड़ दिया और जहां-जहां महाराज का विहार होता है वहां-वहां पर वह महाराज के पास आता है और सब ठीक है।

धन्य हैं जैन साधु और जैन धर्म का चमत्कार, जो ऐसे घोर पंचम काल में अपने तपोबल से ऐसे प्राणियों का कल्याण करने को देश-देश विहार कर रहे हैं जिनका इस समय बाराबंकी में चातुर्मास हुआ और शिखर सम्मेद को याद कर रहे थे। हम भी सिर झुकाकर नमस्कार कर रहे हैं। जो महाराज कह देते हैं कि तेरा काम ठीक होगा तो आज भी ठीक हो जाता है।

श्री मुनि संघ का विहार बाराबंकी से श्रावकों ने लाभ लिया। 31 श्रावक-श्राविका और महाराज जी ने संघ सहित पैदल यात्रा की। रास्ते में जहां मुकाम हुआ, वहां उपदेश हुआ। ग्रामवासियों में जो मांस, मछली खाने वाले थे, खाने का त्याग किया और बेचने वालों ने बेचने का त्याग किया। मजदूरी करना स्वीकार किया। धर्म की प्रभावना हुई। वे आदमी 34 थे। रास्ते में गणेशपुर में मुसलमान भाइयों ने भी मांस खाने का त्याग किया। इस तरह से श्री महाराज जी के प्रवचन से धर्म-लाभ लिया। श्री महाराज जी संघ सहित श्री सम्मेद शिखर जी पधारे। वहां श्री 108 मुनि कुन्थु सागर जी की दीक्षा हुई। फिर वहां से विहार करके ग्रहटी आये। वहां श्री सिद्ध चक्रविधान हुआ। वहां से चलकर भागलपुर चंपापुर में चातुर्मास किया।

भागलपुर से शिखर जी आए। वहां मधुवन में ब्रह्मचारी हल्लाल राजस्थान खेड़ी वाले ने छुल्लकदीक्षा ली, नाम श्री 105 चन्द्रसागर पड़ा। वहां से गुणावां, नवादा, कुंडलपुर, पावापुर, राजगिरि की यात्रा की, वहां ब्रह्मचारी चक्रवर्ती ने छुल्लक दीक्षा ली। नाम श्री 105 सूर्यसागर रखा। वहां से गया-यात्रा करते

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हुए कोडरमा चातुर्मास किया। वहां दीक्षा हुई। ब्रह्मचारी राम-गोपाल फिरोजाबाद, वाले ने और चन्द्रसागरने दीक्षा ली। नाम श्री 105 आदिसागर, दूसरा नाम श्री 105 शीतलसागर। दूसरे रांची होकर आए तो मधुवन मुनि दीक्षा ली नाम 108 शान्ति-सागर दूसरा नाम स्रुतसागर रखा, दो मुनि बने। श्री 105 छुल्लक सनमतिसागर नाम रखा। दीक्षा हुई, ब्रह्मचारी थे। फागुन सुदी चौदस को 2 मुनि दीक्षा हुई। उसी समय सब 21 मुनि, अर्जिका छुल्लिकाएं, छुल्लका और श्रावकमिलकरआचार्य कल्प नाम रखा मधुवन में।

गुरु की समाधि होने पर गुरु की आज्ञा से मुरैना में आचार्य पदवी प्राप्त की या आप जगह-जगह विहार कर अनेक जीवों को कल्याण का मार्ग दर्शाया करते हैं। आज तक हर मुनि आर्थिक शुल्लक-शुल्लिका को दीक्षा देकर आत्मकल्याण दर्शाया है। आप जैसे परम तपस्वी मुनिराज जिनत्व के गौरवमयी हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

विश्ववन्दनीय

श्री १०८ आचार्यश्री सुमति सागरजी महाराज

भावना

भावना दिन रात मेरी सब सुखी संसार हो।
सत्य संयम शील का, व्यवहार घर-घर वार हो ।।टेक।।

धर्म का प्रचार हो, अरु देश का उद्धार हो।
और ये बिगड़ा हुआ, भारत चमन गुलजार हो ।।1।।

ज्ञान के अभ्यास से जीवों का पूर्ण विकास हो।
धर्म के प्रचार से, हिंसा का जग से नाश हो ।।2।।

शान्ति अरु आनन्द का, हर एक घर में वास हो।
वीर वाणी पर सभी संसार का विश्वास हो ।।3।।

रोग अरु भय, शोक होवे दूर सब परमात्मा।
कर सकै कल्याण ज्योति, सब जगत की आतमा ।।4।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

।। भजन ।।

सुमति सागर महाराज तुम्हारी महिमा अपरम्पार
दर्शन करने को आते हैं नर और नार
मुरैना पुरी में है तुमने जन्म लिया
चिरोंजी माता पिता छिद्दू लाल मंगल गोद
खुशियां छाई हैं सारे परिवार में आज। दर्शन···
रेवाड़ी में है तुमने दीक्षा लीनी
गुरु विमल सागर से शिक्षा लीनी
चमका दिया सितारा घर का राग द्वेष को हटाया। दर्शन···
रामदेवी बाई चरणों में हैं आ पड़ीं
तुम दया के दाता हम जायं बलिहारी
दास मुझे बना लो स्वामी सेवा में रहूं सतकार। दर्शन···

गजल

मुझे दृष्टि आतम सुहाई हुई है।
मेरे तन में मन जमाई हुई है।
तेरा ध्यान अनुपम जो पाता खुशी है।
उसी हृदय में सुनाई हुई है।
नगर द्वार वन में सकल थान ढूंढा।
छटा उस प्रभू की जो छाई हुई है।
सकल रंग देखे न वह रंग पाया।
कि जिस रंग में जो रंगाई हुई है।
सकल तत्त्व निर्भय समा बांध रहते।
जहां गुण आगम की समाई हुई है।
जो आनन्द गुण में सदा तृप्त रहते।
उन्हीं को परम लब्धि आई हुई है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

।। आरती ।।

आरती सुमति स्वामी की करूं मैं।
आरती गुणधारी की करूं मैं। आरती......

राग नहीं स्वामी द्वेष नहीं है।
अठाईस मूल गुण धारो मेरे स्वामी ।। आरती......

चिरोंजी माता उर जन्म लियो है।
पिता छिद्दू लाल खुशियां मनायें ।। आरती......

रेवाड़ी में स्वामी दीक्षा है लीनी
गुरु विमल सागर ढिग जाय मेरे स्वामी ।। आरती......

घृत के दीपक भर भर लाय।
प्रेम से आरती उतारूं मेरे स्वामी ।। आरती......

संध्या करके आरती करूं मैं।
अपने पाप मैल धोये मेरे स्वामी ।। आरती......

रामदेवी बाई स्वामी चरणों में आई।
आप सम मोहे बनाय लीजो स्वामी। आरती......

आरती सुमति स्वामी की करूं मैं।
आरती गुणधारी की करूं मैं।। आरती......

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

गुरु-वंदना

श्री सुमत सुमत के करतार हमारी पीर हरो।

जिला मुरैना वाले श्यामपुरा के अवतारी, हमारी पीर हरो।
छिद्दूमल के प्यारे गरभ चिरोंजी के अवतारी, हमारी पीर हरो
श्री सुमत सुमत के करतार हमारी पीर हरो ॥

जन्म जैसवाल गोत्र भण्डारी वाले, हमारी पीर हरो।
परिवार हरा-भरा छोड़ा घर में छोड़ी सम्पति सारी, हमारी०
गुरु विमल सागर से दिगम्बर दीक्षा धारी, हमारी पीर हरो
श्री सुमत सुमत के करतार, हमारी पीर हरो।

देश-विदेश में जाकर देते उपदेश जो भारी। हमारी पीर हरो
बाबरपुर में आये कलाकार की पीर निवारी, हमारी पीर हरो
श्री सुमत सुमत के करतार हमारी पीर हरो ॥

जे के जैन अरदास करत है भारी।
श्री सुमत सुमत के करतार हमारी पीर हरो ॥

दो पग घुटअन से नवें टोहनी से दो हाथ।
मन वचन उर सर नवाकर ज्ञान सुमत को नमस्कार।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भजन

हमें सुमति स्वामी तुम्हारा सहारा।
श्यामपुरा के राजदुलारे छिद्दू लाल के प्राण प्यारे।

जो दर्शन दिये फिर दुबारा भी देना।
वह 'चिरोंजा' के आंखों के तारे ॥1॥

सुना करती थी जो तारीफ तुम्हारी।
तो वैसा ही पाया नजारा तुम्हारा ॥2॥

अजब मुस्कुराहट अजब शान तेरी।
अजब नूर प्यारा, है स्वामी तुम्हारा ॥3॥

जो छीना है दिल को न दिल को हटाना।
हटा लोगे दिल को न होगा गुजारा ॥4॥

करो सेवकों की स्वामी रक्षा।
सब प्राणियों को सहारा तुम्हारा ॥5॥

दया हम पै करना दया के हो सागर।
करोगे तुम्हीं भव सागर से पारा ॥6॥

सिवा प्रेम के हम पै देने को है क्या।
झुका शीश चरणों में स्वामी हमारा ॥7॥

रामदेवी बाई चरणों में आई
क्षमा हम पै करना क्षमा चाहती हूं
बड़े प्रेम से निर्मल पुकारूं ॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

बरसाय रहे श्री मुनि दोय बुंदिया

बरसाय रहे श्री मुनि दोय बुंदिया
दोय बुंदिया रे अढ़ाई बुंदिया। बरसाय० ॥

स्वर्ण कलश भरी जल ले आवो
मुनिवर चरण चढ़ावन को
ये जी जामन मरण मिटावन को ॥ बरसाय० ॥

ॐ ह्रीं श्री 108 सुमति सागर महाराज के चरणारविन्द में जल निर्पामित स्वाहा।

केसर चन्दन घिस-घिस लावो
मुनिवर चरण चढ़ावन को
एजी भव आतप मिटावन को ॥बरसाय०॥
ॐ ह्रीं.........

तन्दुल धोय के अक्षत बनावो
मुनिवर चरण चढ़ावन को
एजी अक्षय पद के पावन को ॥बरसाय ०॥
ॐ ह्रीं.........

बेला, जूही, चमेली मंगावो
गुलाब मंगावो चढ़ावन को
एजी भववाण मिटावन को ॥बरसाय० ॥
ॐ ह्रीं.........

लाडू, पेड़ा, बरफी बनावो
मुनिवर चरण चढ़ावन को
एजी क्षुधा रोग के नाशन को ॥ बरसाय० ॥
ॐ ह्रीं.........

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

जगमग-जगमग दीप जलाओ
कंचन बाती भरि-भरि लावो
एजी मुनिवर चरण चढ़ावन को
मोहान्धकार नशावन को ।। बरसाय० ।।
ॐ ह्रीं·········

दसअंगी मय धूप बनावो
मुनिवर के ढिग खेवन को
एजी अष्ट कर्म को जलावन को ।।बरसाय० ।।
ॐ ह्रीं······

दाख, छुआरे, बादाम मंगावो
श्रीफल बहुत चढ़ावन को
एजी मोक्ष महाफल पावन को ।।बरसाय० ।।
ॐ ह्रीं·········

आरती सुमति सागर जी की

सुमति सागर महाराज की आरती करूं बनाय
विघन-सघन सब दूर हो आनन्द मंगल छाय ।
सुमति सागर के मन में शान्ति की छाया रे
शान्ति की छाया में क्रोध न माया
झलकत समश्रुत काया रे ।। मुनि महाराज के०

मुनिमहाराज के बगीचे में फल मीठे-मीठे
जो भक्त वहां पर हैं स्वाद लेते
उन्होंने मोक्षफल पाया रे ।। मुनि महाराज के०

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

महाराज के बगीचे में ठण्डी-ठण्डी छाया
जो भक्त वहां पर हैं विश्राम लेते
उन्होंने आनन्द सुख पाया रे ।। मुनि महाराज के०

महाराज की जयमाला गावो रे बहनो
आनन्द सुख पावो री ।। मुनि महाराज के०

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

णमोकार मंत्र ही महामंत्र

णमोकार मंत्र ही महामंत्र, निज पद का ज्ञान कराता है।।
नित जपो शुद्ध मन-वच-तन से, मनवांछित फल का दाता है
णमोकार मंत्र ही महामंत्र···।1।

पहिला पद श्री अरिहंताणं, यह आत्म-ज्योति जगाता है।
यह समोशरण की रचना का, भव्यों को याद दिलाता है।
णमोकार मंत्र ही महामंत्र···।2।

दूजा पद श्री सिद्धाणं है, यह आत्म-शक्ति बढ़ाता है।
इससे मन होता है निर्मल, अनुभव का ज्ञान कराता है।
णमोकार मंत्र ही महामंत्र···।3।

तीजा पद श्री आयरियाणं, दीक्षा में भाव जगाता है।
दु:ख से छुटकारा शीघ्र मिले, जिन मत का ज्ञान बढ़ाता है।
णमोकार मंत्र ही महामंत्र···।4।

चौथा पद श्री उज्झायाणं, यह जैन-धर्म चमकाता है।
कर्माश्रिव को ढीला करता यह सम्यक्-ज्ञान कराता है।
णमोकार मंत्र ही महामंत्र···।5।

पंचम पद श्री सब्ब साहूणं, यह जैन तत्त्व सिखलाता है।
दिलवाता है यह ऊंचा पद, संकट से शीघ्र बचाता है।
णमोकार मन्त्र ही महामन्त्र···। 6।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तुम जपो भविक-जन-महामन्त्र अनुपम वैराग्य बढ़ाता है।
नित श्रद्धा से मन से जपने से, मन को शान्त बनाता है।
णमोकार मन्त्र ही महामन्त्र…। 7।

सम्पूर्ण रोग को शीघ्र हरे, जो मन्त्र रुचि से ध्याता है।
जो भव्य सीख नित ग्रहण करे, वो जामन-मरण मिटाता है।
णमोकार मन्त्र ही महामन्त्र…। 8।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

दर्शन विशुद्धि भावना

दोहा

भेदज्ञान बल है प्रकट, निज में निज प्रतिभास।
दरश विशुद्धि नमूं सदा, जा फल शिवपुर बास।1।

'विनय सम्पन्नता भावना'

गुणी लखे आनन्द मन, हो विनम्र त्रय योग।
प्राप्त होय सर्वोच्चपद, विनय भाव संयोग।2।

'निरतिचार शीलव्रत'

आतमलीन निश्चय, बहुविधि के व्यवहार।
शील धरम अतिचार बिन, पाले भवदधि पार।3।

'अभीक्षण ज्ञानोपयोग'

चेतन गुण उपयोगमय, अविरल है गतिमान।
प्रतिफल ज्ञानाभ्यासबल, सुधिर करें मतिमान।4।

'संवेग भावना'

सुतदारादिक विषय सुख, से विरक्त परिणाम।
है संवेग सुभावना, प्रणमूं आठो याम।5।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

'शक्तिस्त्याग भावना'

उत्तम, मध्यम, जघन हैं, तीनों पात्र महान।
देयदान चउविधि सदा, निज की शक्ति प्रमान।6।

'शक्तिमस्तप'

अचल अडिग अति भक्तियुत, मुकतिपंथ चितदेय।
द्वादशविधि तप आदरें, शक्ति प्रमान अजेय।7।

'साधु समाधि भावना'

इष्ट अनिष्टरु मरण या, हो उपसर्ग महान।
रंचक भय नहिं मन धरें, साधु समाधि सुजान।8।

'वैयावृत्य भावना'

ज्वर श्वासादिक व्याधि से, पीड़ित हों मुनिराय।
हों प्रयत्न दुखहरण के, वैयावृत्य कहाय।9।

'अर्हद्भक्ति'

मन वाणी अरु काय से दो अक्षर जिन नाम।
निशदिन के सुमिरण किये अर्हद्भक्ति कहाय।10।

'आचार्य भक्ति'

द्वारापेक्षण विनययुत, अरु आहार सुदान।
आचारज की भक्ति शुभ, वन्दन पूजन जान।11।

'बहुश्रुत भक्ति'

अनेकान्त कथनी जहां, लोकालोक प्रकाश।
बहुश्रुत भक्ति अवश धरे, आतम धर्म विकाश।12।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

'प्रवचन भक्ति'

पंचास्तिकाय छह दरब अरु, नव पदार्थ जतलाय ।
कर्मनाश के भेद जहं, प्रवचन भक्ति कहाय ।13।

'आवश्यक परिहाराणि'

प्रतिक्रमण उत्सर्ग व, समता बन्दन जान ।
शास्त्र-पठन व्युत्सर्ग ये, षट् आवश्यक मान ।14।

'सन्मार्ग प्रभावन'

जिन पूजन उत्सव, गीत नृत्य वादित्र ।
जनमन भरती भावना, है सन्मार्ग पवित्र ।15।

'प्रवचनवात्सल्य भावना'

चारितधारी सुगुरु लख, हो वात्सल्य सुभाव ।
विनयरूप हो जग उठे चरणन प्रति बहु भाव ।16।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

लेश्या और उनके लक्षण

1. कृष्ण लेश्या
2. नील लेश्या
3. कापोत लेश्या
4. पीत लेश्या
5. पद्म लेश्या
6. शुक्ल लेश्या

1. कृष्ण लेश्या के लक्षण

आर्तरौद्रः सदा क्रोधी मत्सरो धर्मवर्जितः ।
निर्दयो वै संयुक्तो कृष्ण लेश्याधिको नराः ॥

अर्थ--कृष्ण लेश्या वाला मनुष्य सदा आर्त-रौद्र ध्यानी, क्रोधी, मत्सरा (ईर्ष्यालु), धर्मरहित, दयारहित, वैर करने वाला होता है ।

कृष्ण वरांशेन मृता अवधिस्था अवरांशमृता ।
जीवकांड पंचमचरमति मिश्रे मध्येन जायन्ते ॥524॥

अर्थ—कृष्ण लेश्या के उत्कृष्ट अंशों के साथ मरे हुए जीव सातवीं पृथ्वी के अवधिस्थान 'नामक इन्द्रक बिल में उत्पन्न होते हैं । जघन्य अंशों के साथ मरे हुए जीव पांचवीं पृथ्वी के अन्तिम पटल के तिमिश्र नामक इन्द्रक बिल में उत्पन्न होते हैं । कृष्ण-लेश्या के मध्यम अंशों के साथ मरे हुए जीव दोनों के (सातवीं पृथ्वी के अविस्थान या अप्रतिष्ठान नामक इन्द्रक बिल और

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

पांचवीं पृथ्वी के अन्तिम पटल सम्बन्धी तिमिश्र नामक बिल के) मध्यस्थान में यथासम्भव योग्यतानुसार उत्पन्न होते हैं।

सातवीं भूमि में पांच विलों का एक ही पटल है। उसके इन्द्रक विल का नाम अप्रतिष्ठान है।

२. नील लेश्या के लक्षण

आलस्यो मंदबुद्धिश्च स्त्री-लुब्धश्च प्रपंचकः।
कातरश्च सदा मानी नील लेश्याधिको नराः।।

अर्थ—नील लेश्या वाला मनुष्य आलसी, मन्द बुद्धि, स्त्री-लोलुप, प्रपंची (धुरपन्थी), कातर (भयभीत), सदा मानी होता है।

नीलोत्कृष्टांश मृताः पञ्चन्ध्रे न्द्रके अवरमृताः।
बालुकासंप्रज्वलिते मध्ये मध्यन जायन्ते ।।525।।

अर्थ—नील लेश्या के उत्कृष्ट अंशों के साथ मरे हुए जीव पांचवीं पृथ्वी का चरम पटल सम्बन्धी अन्ध्र नामक इन्द्र बिल में उत्पन्न होते हैं। कोई-कोई पांचवें पटल में भी उत्पन्न होते हैं। इतना विशेष और भी है कि कृष्ण लेश्या के जघन्य अंश वाले जीव मरकर पांचवीं पृथ्वी के अन्तिम पटल में उत्पन्न होते हैं। नील लेश्या के जघन्य अंश वाले जीव मरकर तीसरी पृथ्वी के अन्तिम पटल सम्बन्धी संप्रज्वलित नामक इन्द्रक बिल में उत्पन्न होते हैं। नील लेश्या के मध्यम अंशों वाले जीव मरकर तीसरी पृथ्वी के संप्रज्वलित नामक इन्द्रक बिल के और पांचवीं पृथ्वी के अन्ध्र नामक इन्द्रक बिल के पहले जितने पटल और इन्द्रक हैं उनमें यथायोग्य उत्पन्न होते हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

३. कापोत लेश्या के लक्षण

शोकाकुले सदा रुष्टः परनिन्दा प्रशंसकः।
संग्रामे प्रर्थ्यते मृत्युः कापोतोऽयमुदिरिते ॥3॥

अर्थ—सदा शोक से व्याकुल, रुष्ट, नाराज, परायी निन्दा करने वाला, संग्राम में (लड़ाई) मृत्यु का इच्छुक कापोत लेश्या वाला है—

वरकोतांशमृताः संज्वालेतं यान्ति तृतीयनिरयस्य।
सीमन्तमवर मृता मध्ये मध्येन जायन्ते ॥526॥

अर्थ—कापोत लेश्या के उत्कृष्ट अंशों के साथ मरे हुए जीव तीसरी पृथ्वी के नौ पटलों में से द्विचरम-आठवें पटल सम्बन्धी संज्वलित नामक इन्द्रक बिल में उत्पन्न होते हैं। कोई-कोई अन्तिम पटल सम्बन्धी संप्रज्वलित नामक इन्द्रक बिल में भी उत्पन्न होते हैं। कापोत लेश्या के जघन्य अंशों के साथ मरे हुए जीव प्रथम पृथ्वी के सीमन्त नामक प्रथम इन्द्रक बिल में उत्पन्न होते हैं और मध्यम अंशों के साथ मरे हुए जीव प्रथम पृथ्वी के सीमन्त नामक प्रथम इन्द्रक बिल से आगे और तीसरी पृथ्वी के द्विचरम पटल सम्बन्धी संज्वलित नामक इन्द्रक बिल के पहले तीसरी पृथ्वी के सात पटल, दूसरी पृथ्वी के ग्यारह पटल और प्रथम पृथ्वी के बारह पटलों में या धम्मा भूमि के तेरह पटलों में से पहले-पहले सीमान्तक बिल के आगे सभी बिलों में यथायोग्य उत्पन्न होते हैं।

इस प्रकार छहों लेश्याओं में से उनके जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट अंशों के द्वारा जीवों का चार गतियों में कहां-कहां तक गमन होता है, यह बताया। अब इसी सम्बन्ध में कुछ विशेष नियम हैं, उनको बताते हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

४. पीत लेश्या के लक्षण

प्रबुद्धा: करुणयुक्ती कार्याकार्य विचारक: ।
लाभालाभे सदापीति: पीतलेश्याधिको नरा: ।4।

अर्थ—पीत लेश्या वाला मनुष्य प्रबुद्ध (बुद्धिमान), करुणा, सहित अच्छे-बुरे का विचार करने वाला, लाभ (प्राप्ति) अलाभ (अप्राप्ति) में सदा समानता रखने वाला होता है।

पीतलेश्या (जीव कांड)

अवरांशमृता: सौधर्मेशानादिर्मो श्रेण्याम् ।
मध्यमांशेन मृता: विमलविमाना दिवलभद्रे ।523।

अर्थ—पीत लेश्या के जघन्य अंशों के साथ मरा हुआ जीव सौधर्म ईशान स्वर्ग के ऋतु नामक इन्द्रक विमान में अथवा श्रेणीबद्ध विमान में उत्पन्न होता है। पीत लेश्या के मध्यम अंशों के साथ मरा हुआ जीव सौधर्म ईशान स्वर्ग के दूसरे-दूसरे पटल के विमल नामक इन्द्रक विमान से लेकर सनत्कुमार माहेन्द्र स्वर्ग के द्विचरम पटल के (अन्तिम पटल से पूर्व पटल के) बलभद्र नामक इन्द्रक विमान पर्यन्त उत्पन्न होता है।

५. पद्म लेश्या के लक्षण

दया शीलो सदात्यागी देवतार्चन तत्पर: ।
शुचिमूर्ती सदानन्दी पद्मलेशाधिको नरा: ।5।

अर्थ—पद्म लेश्या वाला मनुष्य दयावान, त्यागी, देव-पूजा में सदा तत्पर, पवित्रता युक्त, सदा प्रश्न रहने वाला होता है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

मध्यमांशेन मृता तन्मध्यं यान्ति तेज्यष्ठमृत: ।
सनत्कुमार माहेन्द्रान्तिम चक्रेन्द्र श्रेण्याम् ।।522।।

अर्थ—पद्मलेश्या के मध्यम अंशों के साथ मरे हुए जीव सनत्कुमार माहेन्द्र स्वर्ग के ऊपर और सहस्रार स्वर्ग के नीचे नीचे तक विमानों में उत्पन्न होते हैं। पीत लेश्या के उत्कृष्ट अंश के साथ मरे हुए जीव सनत्कुमार माहेन्द्र स्वर्ग के अंतिम पटल में जो चक्रतनाम का इन्द्रक सम्बन्धी श्रेणीबद्ध विमान है, उसमें उत्पन्न होते हैं।

पद्मोत्कृष्टांशमृता जीवा उपयांति खलु सहस्रारम् ।
अवरांशमृता जीवा: सनत्कुमारं च माहेन्द्रम् ।।521।।

अर्थ—पद्मलेश्या के उत्कृष्ट अंशों के साथ मरे हुए जीव नियम से सहस्रार स्वर्ग को प्राप्त हैं। और पद्म लेश्या के जघन्य अंशों के साथ शेष अठारह अंशों का कार्य बनाते हैं।

६. शुक्ल लेश्या के लक्षण

रागद्वेषविनिर्मुक्तो शोकनिद्रा विवर्जित:।
परात्मभाव संपन्न : शुक्ल लेश्याधिको नरा: ।।6।।

अर्थ—शुक्ल लेश्या वाला मनुष्य राग-द्वेष रहित, शोक निन्दा रहित, दूसरों के लिए हित-बुद्धि रखने वाला होता है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

शेषाष्ट दशाशाञ्चतुर्गति गमनस्य कारण निभवन्ति ।
शुक्लोत्कृष्टांशमृता सर्वार्थं यान्ति खलु जीवाः ॥519॥

अर्थ—अपकर्ष काल में होने वाले लेश्याओं के आठ मध्यमांशों को छोड़कर बाकी के अठारह अंश चारों गतियों के गमन के कारण होते हैं। यह सामान्य नियम है। परन्तु विशेष यह है कि शुक्ल लेश्या के उत्कृष्ट अंश से संयुक्त जीव मर कर नियम से सर्वार्थ सिद्ध हो जाते हैं। तथा—

अवरांशमृता भवन्ति शताराद्विके मध्यमांशकेन मृताः ।
आनतकल्पादुपरि सर्वार्थादि मे भवन्ति ।520।

अर्थ—शुक्ल लेश्या के जघंय अंशों से संयुक्त जीव मरकर शतार-सहस्रार स्वर्गपर्यन्त जाते हैं और मध्यमांशोंकार के सहित मरा हुआ जीव सर्वार्थ सिद्धि से पूर्व के तथा आनत स्वर्ग से ऊपर के समस्त विमानों में से यथासम्भव किसी भी विमान में उत्पन्न होता है। और आनत स्वर्ग में भी उत्पन्न होता है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सम्यक्त्वी का चिह्न

सम्यक्त्वी का चिह्न वैराग्य कहा गया है जो मूढ़मान व राग-रंग में डूबा हो, विषय-विष का गर्व कर पान करता हो, उसे कौन तत्त्वज्ञानी मानेगा। वास्तव में आगम की दृष्टि में वह आत्मा अज्ञानी है। क्षत्रचूड़ामणि का यह कथन कितना वास्तविक है—

तत्त्वज्ञानं च मोघं स्यात् तद्विरुद्ध प्रवर्तिनाम्।
पाणौ कृतेन दीपेन किं कूपे पततां फलम्।

विरुद्ध आचरण करने वालों के तत्त्वज्ञान व्यर्थ ही हैं, कूप में गिरने वाले के हाथ में दीपक धारण करने का क्या प्रयोजन है ? संसार के सभी सम्प्रदाय के विचारक यह बात कहा करते हैं कि जिस उच्चवर्णीया विचारधारा का प्रतिबिम्ब यदि जीवन में नहीं उतरा तो वह कथन मक्कारी ही है। अहिंसा की बात करने वाला व्याघ्र यदि जीवघात करता चला जाता है, शील का गौरव गाती हुई कोई स्त्री वेश्यावृत्ति को नहीं छोड़ती है, सत्य की गुण-गाथा गाता हुआ कोई छल-प्रपंच तथा प्रतारणा में संलग्न रहता है तो इससे धर्म को क्षति पहुंचती है, अधर्म की प्रतिष्ठा बढ़ती है। आत्म-धर्म की चर्चा करने वालों को अपने नैतिक जीवन के स्तर को उच्च रखने की ओर विशेष सावधान रहना चाहिए। उन्हें सोचना चाहिए कि मेरा जीवन पशुओं की श्रेणी लायक है या पुरुषार्थी एवं विवेकी मानव के योग्य है। कवि कहता है—

प्रत्यहं प्रत्यवेक्षेत् नरश्चरितमात्मनः।
किन्तु मे पशुभिस्तुल्यं किन्तु सत्पुरुषैरिति ॥

पुरुष का कर्त्तव्य है कि वह प्रतिदिन यह देखे कि मेरा चरित्र पशुओं के तुल्य है या सत्पुरुषों के तुल्य है। आहार, मैथुन,

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भय, निद्रा—ये चार बातें पुरुषों में भी पायी जाती हैं जैसी पशुओं में पायी जाती हैं। जिस व्यक्ति का दिन खाने में, सोने में, धन की कमाई करने में, विषय-सेवनादि प्रवृत्ति में गया वह स्वयं विचार करे कि मेरा आज का दिन सत्य की भाषा में पशु-तुल्य व्यतीत हुआ। यदि उसका समस्त समय खान-पान तथा निद्रा में बीतता है तो उसे पशु ही कहना होगा, मनुष्य नहीं।

आज तत्त्व-ज्ञान, आत्म-विद्या, निश्चय दृष्टि आदि का कथन करने वाला जीव हंस का नाम रखा वकराज के मार्ग का अनुकरण करता है तो उससे न व्यक्ति का भला है और न उसके अनुयायियों का ही कल्याण होगा। संयम कहो, व्रत कहो या सदाचार कहो, इसका विरोध करने वाला स्वयं सज्जनता के विरुद्ध काम करता है। सदाचारी, व्रती अथवा संयमी का निरादर करना तथा भोले लोगों में यह भ्रम फैलाना कि इस काल में संयमी नहीं होते, सरासर अपने को ही सवंज्ञ का उत्तराधिकारी मान भगवान के कथन विरुद्ध प्रतिपादन करना है—

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

गोम्मटसार जी का एडम नं० 293

तिरधियसय णवणउदी छएणउदी अप्पमत्त वे कोड़ी।
पंचवय तेणउदी, णवद्य विसयच्छउत्तरं पमेदे।
अधिकशतन वनवतिः षएणवति: अप्रमत्तोद्वे कोटी।
पंचैव च त्रिनवतिः नवाष्ट द्विशत षडुत्तर प्रमत्ते।।
(नं० 625)

अर्थ—प्रमत्त गुण स्थान वाले जीवों का प्रमाण पांच करोड़ तिरानबे लाख अट्ठानवे हजार दो सौ छह (5,93,98,206) है। अप्रमत्त गुण स्थान वाले जीवों का प्रमाण दो करोड़ छियानबे लाख निन्यानबे हजार एक सौ तीन (2,96,99,103) है।

त्रिशतं भणन्ति के चित्त चतुरुत्तर मस्त पंचक केचित् ।।226।।
उपशामक परिमाण क्षपकाणं जानीहि तद्द्विगुणम् ।।

अर्थ—उपशम श्रेणी वाले आठवें, नौवें, दशवें, ग्यारहवें गुण स्थान वाले जीवों का प्रमाण कोई आचार्य तीन सौ कहते हैं, कोई तीन सौ चार कहते हैं, कोई दो सौ निन्यानबे कहते हैं। क्षपक श्रेणी वाले आठवें, नवें, दशवें, बारहवें गुणस्थान वाले जीवों का प्रमाण उपशम श्रेणी वालों से दूना है।

उपशम श्रेणी वाले तीन सौ चार जीवों का निरन्तर आठ समयों नं० ।।627।। षोडशक चतुर्विशतिः त्रिशत: त्रिशत् षट् त्रिशति तथा च द्वत्वा अष्ट चत्वारिंशत् चतुः पंचाशत् चतुः पंचाशत् भवन्ति उपशमके रिंशत ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अर्थ—निरन्तर आठ समय पर्यन्त उपशम श्रेणी माड़ने वाले जीवों में अधिक-से-अधिक प्रथम समय में 13, द्वितीय समय में 24, तृतीय समय में 30, चतुर्थ समय में 361, पांचवें समय में 42, छठे समय में 48, सातवें समय में 54 और आठवें समय में 54 जीव होते हैं।

द्वात्रिंशदष्ट चत्वारिंशत् षष्ठिः द्वासप्ततिश्च चतुरशीतिः।
षट्णवतिः दोहा अष्टोत्तर शतमष्टोत्तर शतं च क्षपकेषु॥

(दोहा नं० 628)

अर्थ—अन्तराय-रहित निरन्तर आठ समय पर्यन्त क्षपक श्रेणी माड़ने वाले जीव अधिक-से-अधिक उपर्युक्त आठ समयोंक होने वाले उपशम श्रेणी वालों से दूने होते हैं। इनमें से प्रथम समय में 32, दूसरे समय में 48, तीसरे समय में 60, चतुर्थ समय में 72, पांचवें समय में 84, छठे समय में 96, सातवें समय में 103, आठवें समय में 108 होते हैं।

अष्टैव शत सहस्राणि अष्टानवतिस्तथा सहस्राणाम्।
संख्या योगिजिनानां पंचशतव्युत्तरं वन्दे ॥629॥

अर्थ—संयोग केवली जिनों की संख्या आठ लाख अट्ठानबे हजार पांच सौ दो है। इनकी मैं सदा काल वन्दना करता हूं।

भावार्थ—निरन्तर आठ समयों में एकत्रित होने वाले संयोगी जिनकी संख्या दूसरे आचार्य की अपेक्षा इस प्रकार कही है कि "छसु सुद्ध समये सुतिरिण तिरिण जीवा केवल मुघाययंति दोसु समयेसु दो-दो जीवा केवल मुघाययन्ति एव मट्ठ समय सचिद जीवा वावीसा हवन्ति।" अर्थात् आठ समयों में से छह समयों में प्रति समय तीन-तीन जीव केवल ज्ञान को उत्पन्न करते हैं,

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

और दो समयों में दो-दो जीव केवल ज्ञान को उत्पन्न करते हैं। इस तरह आठ समयों में बाईस संयोगी जिन होते हैं।

जब केवल ज्ञान के उत्पन्न होने में छह महीने का अन्तराल होता है तब अन्तराल के अनन्तर छह महीना आठ समय में से केवल निरन्तर आठ समयों में ही बाईस केवली होते हैं। इसके विशेष कथन में छह प्रकार का त्रैराशिक होता है। प्रथम यह है कि जब छह महीना आठ समय मात्र काल में बाईस केवली होते हैं, तब आठ लाख अट्ठानबे हजार पांच सौ दो केवली कितने काल में होंगे। इसमें चालीस हजार आठ सौ इकतालीस को छह महीना आठ समयों से गुणा करने पर जो काल का प्रमाण लब्ध आए, वही उत्तर होगा। दूसरा छह महीना आठ समयों में निरंतर केवल ज्ञान उत्पन्न होने का काल आठ समय है तब पूर्वोक्त प्रमाण काल में कितने समय होंगे। इसका उत्तर तीन लाख छब्बीस हजार सात सौ अट्ठाईस है। तथा दूसरे आचार्यों के मत की अपेक्षा आठ समयों में बाईस या चवालीस या अठासी या एक सौ छिहत्तर जीव केवल ज्ञान को उत्पन्न करते हैं। तब पूर्वोक्त समय प्रमाण में या उसके आधे में या चतुर्थांश में या अष्टमांश में कितने जीव केवल ज्ञान को उत्पन्न करेंगे। इन चार प्रकार के त्रैराशिकों का उत्तर आठ लाख अट्ठानबे हजार पांच सौ दो होता है।

क्षपक तथा उपशमक जीवों की युगपत् सम्भवती विशेष संख्या को तीन गाथाओं में कहते हैं।

भवन्ति क्षपका एक समये बोधित बुद्धाश्च पुरुषवेदाश्च।
उत्कृष्टेनाष्टोत्तरशत प्रमाः स्वर्गतश्च च्युताः ॥63॥
प्रत्येक बुद्धतीर्थंकर स्त्री नपुंसक मनोविधज्ञान युताः।
दशषट्कविंशतिदशविंशत्यष्टाविंशो कथा क्रमशः ॥63॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

ज्येष्ठावर बहुमध्यामावगाहा द्वौ चत्वारोऽष्टैव।
युगपत् भवंति क्षपका उपशम का अर्धने तेषाम् विशेष कम् ॥632॥

अर्थ—युगपत्-एक समय में क्षपक श्रेणी वाले जीव अधिक से अधिक होते हैं तो कितने होते हैं? इसका प्रमाण इस प्रकार है कि बोधित बुद्ध एक सौ आठ, पुरुषवेदी एक सौ आठ, स्वर्ग से च्युत होकर मनुष्य होकर क्षपक श्रेणी माड़ने वाले एक सौ आठ, प्रत्येक बुद्धि ऋद्धि के धारक दश, तीर्थंकर छह, स्त्रीवेदी बीस, नपुंसकवेदी दश, मन:पर्यवज्ञानी बीस, अवधिज्ञानी अट्ठाईस, मुक्त होने के योग्य शरीर की उत्कृष्ट अवगाहना के धारक दो, जघन्य अवगाहना के धारक चार, समस्त अवगाहनाओं के धारक आठ। ये सब मिलकर चार सौ बत्तोस होते हैं। उपशम श्रेणी वाले इसके आधे (216) होते हैं।

भावार्थ—पहले तो गुणस्थान में एकत्रित होने वाले जीवों की संख्या बतायी थी, और यहां पर श्रेणी में युगपत् सम्भवती जीवों की उत्कृष्ट संख्या बतायी है।

अब सर्व संयमी जीवों की संख्या को बताते हैं।

सप्तादयोऽष्टान्ता: षण्णवमध्याश्च संयता: सर्वे।
अन्जलि मौलिक हस्तस्त्रिकरण शुद्धया नमस्यामि ॥633॥

अर्थ—सात आदि में, आठ अन्त में और दोनों अंकों के मध्य में छह जगह नौ अंक "अंकानां वामतो गति:" के नियमानुसार रखने पर सम्पूर्ण संयमियों का प्रमाण होता है अर्थात् छठे गुणस्थान से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक के सर्व संयमियों का प्रमाण तीन कम नौ करोड़ है (89999997)। इनको मैं हाथ

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

जोड़कर सिर नवाकर मन, वचन, काय की शुद्धि पूर्वक नमस्कार करता हूं।

भावार्थ—प्रमत्त वाले जीव 59398206, अप्रमत्त वाले 29699103, उपशम श्रेणी वाले चारों गुणस्थानवर्ती 1196, क्षपक श्रेणी वाले चार गुणस्थानवर्ती 2392, संयोगी जिन 898502, इन सबका जोड़ 89999399 होता है। सो इसको सर्वसंयमियों के प्रमाण में से घटाने पर शेष अयोगी जीवों का प्रमाण 598 रहता है। इसको भी संयमियों के प्रमाण में जोड़ने से संयमियों का कुल प्रमाण तीन कम नौ करोड़ होता है। उनको मैं हाथ जोड़कर बारम्बार नमस्कार करता हूं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भजन

श्री 108 आचार्य सुमति सागर जी महाराज के चरणों में

ज्ञान गुणों की खान मुनिवर, मैं महिमा तुम्हरी गाता हूं।
नाम तुम्हारा सुमति सागर, तुमको शीश झुकाता हूं ।।टेक।।
वीतराग है छवि तुम्हारी, सबके मन को भाती है।
दर्शन करने से मुनिवर के, दूर विपत्ति भग जाती है ।।
तुमरे दर्शन करके मुनिवर, अपना भाग्य सराहता हूं ।।1।।
जिस नगरी में जाते मुनिवर, नगर वो पावन हो जाता ।
रोग नहीं रहते नगरी में, आनंद मंगल छा जाता ।।
करके भक्ति पूज्य मुनि की, फूला नहीं समाता हूं ।।2।।
ज्ञान-ध्यान की मूरत मुनिवर, संयम की फुलवारी है।
दस पौधे हैं फुलवारी में, हर पौधा गुणकारी है ।।
लेकर मुनिवर ज्ञान आपसे कविता लिखता जाता हूं ।।3।।
जिस नगरी में मुनि पधारे, नगरी वो आबाद हुई ।
करके दर्शन जनता तुमरे; तुम चरणों की दास हुई ।।
दास तुम्हारा हूं मैं मुनिवर, श्रद्धा तुममें रखता हूं ।।4।।
राग-द्वेष का नाम नहीं है, हित उपदेश सुनाते हो।
रात्री भोजन त्याग कराकर, धर्म का महत्त्व बताते हो ।।
करके त्याग रात्रि का भोजन, गीत तुम्हारे गाता हूं ।।5।।
जब से दर्शन किये तुम्हारे, तब से आत्म-ज्ञान हुआ।
आत्म से बनता परमात्म, ऐसा मुझको भान हुआ ।।
मिले सदा दर्शन मोहन को, भाव यही मन लाता हूं ।।6।।

रचयिता—मोहन लाल जैन (बावली वाले)
शाहदरा, दिल्ली-32

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

मुक्तक

समुद्र के पानी को नापा नहीं जाता।
आकाश के सितारों को गिना नहीं जाता।।
सरस्वती के भण्डार को तोला नहीं जाता।
सुमति सागर के चरणों को, मुझसे छोड़ा नहीं जाता।। 1।।

प्रभु का दरबार ही अनन्त सुख का टैंक है।
अनन्त सुख के टैंक में सम्यक् रूपी बैंक है।।
सम्यक् रूपी बैंक में, जो भी खाता खोलेगा।
दस धर्म रूपी ब्याज कमाकर, मोक्ष का द्वार खोलेगा।।2।।

क्या रखा है इस दौलते जहान में।
क्या रखा है इस पक्के मकान में।।
जहां पर रखा है वहां पर तू जाता नहीं।
एक बार भी चला गया तो फिर वापस आता नहीं।।3।।

रेत की दीवार, ज्यादा नहीं चलती।
बिना पेट्रोल के गाड़ी नहीं चलती।।
पत्थर की नाव तैरती नहीं देखी।
पाप की कमाई ठहरती नहीं देखी।।4।।

जहर की प्याली पीयी नहीं जाती।
की हुई मेहनत खाली नहीं जाती।।
इज्जत पै दाग धोया नहीं जाता।।
मिश्री में मिठास घोला नहीं जाता।।5।।

रचयिता—मोहनलाल जैन (बावली वाले)
शाहदरा, दिल्ली-32

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

ज्ञान ज्योति

तज्जयति परं ज्योतिः समस्तैरनन्तर्यायैः।
दर्पणतल इव सकला प्रतिफलति पदार्थमालिका यत्र ॥1॥

पंच परमेष्ठियों के नाम

1. अरिहन्त, 2. सिद्ध, 3. आचार्य, 4. उपाध्याय, 5. सर्व-साधुगण।

देवदर्शन

ॐ जय जय जय निस्सहि निस्सहि निस्सहि
निः संगोऽहं जिनानां सदनमनुपमं विपरीत्यैन्या भक्त्या
स्थित्वा गत्वा निषद्योच्चरण परिणतोन्तः शनैर्हस्तयुग्मम् ॥

भाले संस्थाप्य बुध्या मम दुरितहरं कीर्तये शक्रवंद्यम्।
निंदादूरं सदाप्तं क्षयरहितममुं ज्ञानभानुं जिनेन्द्रम् ॥1॥

दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पापनाशनम्।
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम् ॥1॥
दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनाम् वंदनेन च।
न चिरं तिष्ठते पापम्, छिद्रहस्ते यथोदकम् ॥2॥

वीतरागमुखं दृष्टवा, पद्मरागसमप्रभम्।
जन्म जन्म कृतम् पापं, दर्शनेन विनश्यति ॥3॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

दर्शनं जिनसूर्यस्य संसारध्वान्तनाशनम्।
बोधनं चित्त पद्मस्य समस्तार्थ प्रकाशकम् ॥4॥

दर्शनम् जिनचन्द्रस्य, सद्धर्मामृतवर्षणम्।
जन्मदाहविनाशाय वर्धनं सुखवारिधेः ॥5॥

जीवादितत्त्वप्रतिदर्शकाय, सम्यक्त्वमुख्याष्टगुणाश्रयाय ॥
प्रशान्तरूपाय दिगम्बराय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥6॥

चिदानन्दैकरूपाय जिनाय परमात्मने।
परमात्मप्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥7॥
अन्यथाशरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम।
तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥8॥

नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगत्रय।
वीतरागात्परो देवा न भूतो न भविष्यति ॥9॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने।
सदा मेस्तु सदा मेस्तु, सदामेस्तु भवे भवे ॥10॥

जिने भक्तिर्जिने भक्ति जिने भक्ति सदास्तु मे,
सम्यक्त्वमेव संसार वारणं मोक्ष कारणं।
श्रुते भक्ति श्रुते भक्ति श्रुते भक्ति सदास्तु मे
सद्ज्ञानमेव संसार वारणं मोक्ष कारणं।
गुरौभक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्ति सदास्तु मे
चारित्रमेव संसार वारणं मोक्ष कारणं।

जिन धर्मविनिर्मुक्तो, माभूव चक्रवर्त्यपि।
संचितोपि दरिद्रोऽपि, जिनधर्मेनिवासनम् ॥11॥
जन्म जन्म कृतं पापं, जन्मकोटिमुपार्जितं।
जन्ममृत्युजरारोगं हन्यते जिनदर्शनात् ॥12॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सार्थणमोकार मंत्र

णमो अरिहंताणं

कर्म रूपी शत्रु को जीत लिया है जिसने, उसको नमस्कार हो।

णमो सिद्धाणं

जिसने सकल कार्य सिद्ध किया है, ऐसे सिद्ध को नमस्कार हो।

णमो आयरियाणं

छत्तीस गुण युक्त हैं। ऐसे आचार्य को नमस्कार हो।

णमो उवज्झायाणं

पच्चीस गुण युक्त होकर भी पठन-पाठन युक्त (समर्थ) है, उस उपाध्याय को नमस्कार हो।

णमो लोये सव्व साहूणं

लोक में उत्तम (श्रेष्ठ) साधु, उन सबको नमस्कार हो।

तीर्थंकरों के बारे में प्रश्नोत्तर

1. तीर्थंकर किसको कहते हैं!

   सब तीर्थ में श्रेष्ठ होकर (रहकर) जिन धर्म को स्थापित किया है जिनने उनको तीर्थंकर कहते हैं!

2. तीर्थंकर कितने हैं?

   इस भरत क्षेत्र में तीर्थंकर के तीन चौबीसी मानते हैं।

3. तीन चौबीसी कौन-कौन हैं?

   1 अतीत चौबीसी, 2 अनागत चौबीसी, 3 वर्तमान चौबीसी।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

4. अतीत, अनागत और वर्तमान माने क्या ?
अतीत याने भूतकाल में हुए हैं वे, अनागत—आगामी (भविष्यत्) काल में होने वाले ! वर्तमान—अभी (वर्तमान में) शुरू है ।

5. तीर्थंकरों का जन्म-स्थल कौन-सा माना गया है ?
सब तीर्थंकरों का जन्म-स्थल अयोध्या नगरी मानी गई है। (काल दोष के योग से बहुत तीर्थंकरों का जन्म अन्य जगह हुआ है, किन्तु मुख्य अयोध्या है।)

6. तीर्थंकर मोक्ष को कौन से स्थान से गये ?
तीर्थंकर सम्मेद शिखर जी, यहां से मोक्ष गये और जायेंगे।

(सांप्रतत काल दोष से चार तीर्थंकर अन्य जगह से मोक्ष गये ।)

7. अन्य जगह से कौन-कौन तीर्थंकर मोक्ष गए ?
कैलाश से आदिनाथ जी, चंपापुरी से वासुपूज्यजी, गिरनार (गिरना) जी से नेमिनाथ जी, पावपुर से महावीर जी।

8. तीर्थंकर कौन-सी भाषा बोलते थे ?
अर्द्धमागधी भाषा (गीर्वाण) बोलते थे।

9. तीर्थंकरों की भाषा कौन-कौन जानते थे ?
जो गणधर थे वे समझते थे। और वे सभी को संस्कृत भाषा में समझाते थे ।

10. शिखर जी से कितने तीर्थंकर मोक्ष गए ?
वहां से अनन्त तीर्थंकर मोक्ष गये ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अतीत चौबीस तीर्थंकरों का नाम

1 श्री निर्वाण जी, 2 सागर जी, 3 महासाधु जी, 4 विमल प्रभु जी, 5 श्रीधर जी, 6 सुदत्त जी 7, अमल प्रभू जी, 8 अद्धर जी, 9 अंगिर जी, 10 सन्मति जी, 11 सिंधुनाथ, 12 कुसुमांजलि जी, 13 शिवगण जी, 14 उल्लाह् जी, 15 ज्ञानेश्वर जी, 16 परमेश्वर जी, 17 विमलेश्वर जी, 18 यशोधर जी, 19 कृष्णमति जी, 20 ज्ञानमति जी, 21 शुद्धमति जी, 22 श्री भद्र जी, 23 अति-क्रांति जी, 24 शान्ति जी ।

वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों के नाम

1 श्री ऋषभ जी, 2 अजित जी, 3 शंभव जी, 4 अभिनन्दन जी, 5 सुमति जी, 6 पदमप्रभु जी, 7 सुपार्श्व जी, 8 चन्द्रप्रभु जी, 9 पुष्पदन्त जी, 10 शीतल जी, 11 श्रेयांस जी, 12 वासुपूज्य जी, 13 विमलनाथ जी, 14 अनन्तनाथ जी, 15 धर्मनाथ जी, 16 शान्तिनाथ जी, 17 कुन्थुनाथ जी, 18 अरहनाथ जी, 19 मल्लिनाथ जी, 20 मुनि सुव्रतनाथ जी, 21 नमिनाथ जी, 22 नेमिनाथ जी, 23 पार्श्व जी, 24 महावीर जी ।

अनागत चौबीस तीर्थंकरों के नाम

1 श्री महापद्म जी, 2 सुरदेव जी, 3 सुपार्श्व जी, 4 स्वयंप्रभू जी, 5 सर्वात्मभूत जी, 6 श्रीदेव जी, 7 कृलपुत्र देव जी, 8 उदक-देव जी, 9 प्रौष्ठिलदेव जी, 10 जयकीर्ति जी, 11 मुनिसुव्रत जी, 12 अरह जी, 13 नि:पाप जी, 14 नि:कषाय जी, 15 विपुल जी,

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

16 निर्मल जी, 17 चित्रगुप्त जी, 18 समाधिगुप्त जी, 19 स्वयं-प्रभु जी, 20 अनिवृत जी, 21 जयनाथ जी, 22 श्री विमल जी, 23 देवपाल जी, 24 अनन्त वीर्य जी ।

बीस विद्यमान तीर्थंकरों के नाम

1 श्रीमधर जी, 2 युग्मन्धर जी, 3 बाहु जी, 4 सुबाहु जी, 5 सुजातप जी, 6 स्वयं प्रभु जी, 7 वृषभानन जी, 8 अनन्तवीर्य जी, 9 सूरप्रभ जी, 10 विशालकीर्ति जी, 11 वज्रधर जी, 12 चंद्रानन जी, 13 चन्द्रबाहु जी, 14 भुजंगम जी, 15 ईश्वर जी, 16 नेम-प्रभ जी, 17 बीरसेन जी, 18 महाभद्र जी, 19 देवयश जी, 20 अजितवीर्य जी ।

चौबीस कामदेव

1 बाहुबली, 2 प्रजापती, 3 श्रीधर, 4 दर्शनभद्र, 5 प्रसेन चन्द्र, 6 चन्द्रवर्ण, 7 अग्नियुक्त, 8 सनत्कुमार, 9 वत्सराज, 10 कनक प्रभ, 11 मेघ प्रभ, 12 शान्तिनाथ, 13 कुन्थुनाथ, 14 अरहनाथ, 15 विजयराज, 16 श्रीचन्द्र जी, 17 नलराजा, 18 हनुमन्त, 19 बलि-राजा, 20 वसुदेव, 21 प्रद्युम्न, 22 नाग-कुमार, 23 जीवंधर जम्बूस्वामी ।

चौदह कुलकर

1 प्रतिश्रुत , 2 सन्मति, 3 क्षेमंकर, 4 क्षेमंधर, 5 सीमंकर, 6 सीमंधर, 7 विमलवाहन, 8 चक्षुष्मान, 9 यशस्वी, 10 अभिचन्द्र, 11 चन्द्राभ, 12 मरुदेव, 13 प्रसेनचन्द्र, 14 नाभिनरेन्द्र ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

बारह चक्रवर्ती

1 भरत चक्री, 2 सागर चक्री, 3 माघवा चक्री, 4 सनत्कुमार चक्री, 5 शान्तिनाथ चक्री, 6 कुन्थुनाथ चक्री, 7 अरहनाथ चक्री, 8 सुभौम चक्री, 9 पद्मनाभ चक्री, 10 हरिसेन चक्री, 11 जयसेन चक्री, 12 ब्रह्मदत्त चक्री ।

नव वासुदेव

1 त्रिपुष्ट, 2 द्विपुष्ट, 3 स्वयंभु, 4 पुरुषोत्तम, 5 नरसिंह, 6 पुंडरीक, 7 दत्तदेव, 8 लक्ष्मण, 9 कृष्ण ।

नव प्रतिवासुदेव

1 अश्वग्रीव, 2 तारक, 3 मरक, 4 निसुंभ, 5 मधुकैटभ, 6 प्रह्लाद, 7 बली, 8 रावण, 9 जरासंध ।

नव बलिभद्र

1 विजय, 2 अचल, 3 धर्मप्रभ, 4 सुप्रभ, 5 सुदर्शन, 6 नन्दी, 7 नद-मित्र, 8 रामचन्द्र, 9 पद्म ।

नव नारद

1 भीम, 2 महाभीम, 3 रुद्र, 4 महारुद्र, 5 काल, 6 महाकाल, 7 दुर्मुख, 8 नरकमुख, 9 अधोमुख ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

ग्यारह (अकरा) रुद्र

1 भीमबली, 2 जितशत्रु, 3 रुद्र, 4 विश्वानल, 5 सुप्रतिष्ठ, 6 अचल, 7 पुंडरीक, 8 अजितधर, 9 अजितनाथ, 10 बाल, 11 सातकी।

सात नरक

1 रत्नप्रभा, 2 शर्कराप्रभा, 3 बालुकाप्रभा, 4 पंकप्रभा, 5 धूम प्रभा, 6 तमः प्रभा, 7 महातमः प्रभा।

सोलह स्वर्ग

1 सौधर्म, 2 ऐशान, 3 सनन्तकुमार, 4 महेन्द्र, 5 ब्रह्म, 6 ब्रह्मोत्तर, 7 लान्तव, 8 कापिष्ट, 9 शुक्र, 10 महाशुक्र, 11 शतार, 12 सहरआर, 13 आनत, 14 प्राणत, 15 आरग्रका, 16 अच्युत।

चौदह नदियां

1 गंगा, 2 सिन्धु, 3 रोहित, 4 रोहितारया, 5 हरित, 6 हरिकान्ता, 7 सीता, 8 सीतोदा, 9 नारी, 10 नरकान्ता, 11 सुवर्णकूला, 12 रक्तोदा, 13 रक्ता, 14 रक्तोदा।

सोलह कारण अङ्ग

1 दर्शनविशुद्धि, 2 विनयसम्पन्नता, 3 शीलव्रतेष्वनतिचार, 4 अभीक्षणज्ञानोपयोग, 5 संवेग, 6 शक्ति, 7 तप, 8 साधुसमाधि, 9 वैयावृत्ति, 10 अर्हद्भक्ति, 11 आचार्यभक्ति, 12 बहुश्रुत

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भक्ति, 13 प्रवचन भक्ति, 14 आवश्यक परिहार, 15 मार्ग-प्रभावना, 16 प्रवचन वात्सल्य।

आठ द्वीप

1 जम्बू द्वीप, 2 घातकी द्वीप, 3 पुष्कर द्वीप, 4 वारणीवर द्वीप, 5 क्षीरवर द्वीप, 6 घृतवर द्वीप, 7 इक्षुवर द्वीप, 8 नन्दीश्वर द्वीप।

सात क्षेत्र

1 भरत क्षेत्र, 2 हेमवत क्षेत्र, 3 परिक्षेत्र, 4 विदेहक्षेत्र, 5 यक क्षेत्र, 6 हैरण्यवत क्षेत्र, 7 ऐरावत क्षेत्र।

नन्दीश्वर द्वीप में ५२ पर्वत

1 पूरब में तेरह, 2 पश्चिम में तेरह, 3 उत्तर में तेरह, 4 दक्षिण में तेरह। सब मिलाकर 52 पर्वत हैं।

एकैक दिशा में रहने वाले तेरह पर्वतों के नाम

1 अंजनगिरि एक, 2 दधिमुख चार, 3 रतिकर आठ। इसी प्रकार 52 पर्वत हैं।

ये ही नाम चारों दिशाओं के पर्वतों के हैं। एकैक पर्वत पर एक जिन मन्दिर है। उनमें 108 जिन प्रतिमा विराजमान हैं।

दस प्रकार के भवनवासी देव

1 असुरकुमार, 2 नागकुमार, 3 विद्युतकुमार, 4 सुपर्ण

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

क़ुमार, 5 अग्निकुमार, 6 द्वीपकुमार, 7 उदधिकुमार, 8 दिक्क-कुमार, 9 वायुकुमार, 10 सनतकुमार।

व्यन्तर देवों के आठ प्रकार

1 किन्नर, 2 किम्पुरुष, 3 महोरग, 4 गंधर्व, 5 यश, 6 राक्षस, 7 भूत, 8 पिशाच।

पांच प्रकार के ज्योतिष देव

1 सूर्य, 2 चन्द्र, 3 ग्रह, 4 नक्षत्र, 5 तारे।

सोलह स्वर्ग की अपेक्षा से कल्पवासी देव सोलह प्रकार के होते हैं और इन्द्र की अपेक्षा से बारह प्रकार के होते हैं। कल्पवासी देवों के बाद कल्पातीत देव होते हैं।

पांच अनुत्तर विमान

1 विजय, 2 वैजयन्त, 3 जयन्त, 4 अपराजित, 5 सर्वाथ सिद्धि के ऊपर मुक्ति शिला 45 लाख योजन विस्तार वाला है। वहां अनन्त सिद्ध शाश्वत विराजमान हैं।

सात तत्त्व, नव पदार्थ

1 जीव, 2 अजीव, 3 आश्रव, 4 बन्ध, 5 संवर, 6 निर्जरा, 7 मोक्ष।

ये सात तत्त्व, इनमें पाप और पुण्य मिला देने से नव पदार्थ होते हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

चौदह रत्न

1 सुदर्शनचक्र रत्न, 2 सुनंदखंडारत्न, 3 दंड रत्न, 4 चमर रत्न, 5 छत्र रत्न, 6 चूड़ामणि रत्न, 7 सेनापति रत्न, 8 चिन्तामणि कांकिणी रत्न, 9 अजिकजय अश्व रत्न, 10 भजकुण्ड स्थापित रत्न, 11 विधिसागर पुरोहित रत्न, 12 विजयार्धपर्वत गज रत्न, 13 कामवृद्धि ग्रहपति रत्न, 14 सुभद्रानामक स्त्री रत्न।

नव निधि

1 काल निधि, 2 महाकाल निधि, 3 पाण्डुक निधि, 4 मानवाख्य निधि, 5 नैसपरिया निधि, 6 सर्वरत्नारख्य निधि, 7 शंख निधि, 8 पदम निधि, 9 पिंगला निधि।

1 काल निधि—वांछित पुस्तक और विद्या देने वाली। 2 महाकाल निधि—सुवर्णादि सम्पत्ति देने वाली। 3 पाण्डुक निधि—सुगंधित षड्‌रस भोजन देने वाली। 4 मानवाख्य निधि—शस्त्रायुध देती है। 5 नैसपरिव्य निधिः—बर्तन, शैय्यासनमन्दिरादि देती है। 6 सर्वरत्नराध्य निधि—माणिक आदि रत्न देने वाली है। 7 शंख निधि—वाद्य देती है। 8 पदम निधि—मूल्यवान वस्त्र देने वाली। 9 पिंगलाख्य निधि—दागिना देने वाली है।

सत्रह नियम

1 भोजन, 2 सचित्तवस्तु, 3 ग्रह, 4 संग्राम, 5 दिशागमन, 6 (औषध) दवादिलेपन, 7 ताम्बूल, 8 पुष्पसुगन्ध, 9 नाच देखना, 10गीत श्रवण, 11 स्थान, 12 ब्रह्मचर्य, 13 आभूषण, 14 वस्त्र, 15 शय्या, 16 दवाखाना, 17 सवारी पर बैठना।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हर एक दिन में इसका प्रमाण करना। इनमें से जो प्रमाण रखने में मुश्किल है, उसका प्रमाण मत रखना।

आठ प्रकार के मद

1 जाति, 2 कुल, 3 बल, 4 रूप, 5 विद्या, 6 तप, 7 धन, 8 ऐश्वर्य।

श्रावकों के इक्कीस गुण

1 लज्जावान, 2 दयालु, 3 प्रसन्न, 4 प्रतीत वंत, 5 परदोषाच्छादन, 6 परोपकारी, 7 सौम्यदृष्टि, 8 गुणग्राही, 9 श्रेष्ठपक्षी, 10 मिष्टवादी, 11 दीर्घविचारी, 12 दानवान, 13 शीलवन्त, 14 कृतज्ञ, 15 तत्त्वज्ञ, 16 धर्मज्ञ, 17 मिथ्यात्वरहित, 18 सन्तोषी, 19 स्याद्वादभाषी, 20 अभक्ष्यत्यागी, 21 षट्कर्मप्रवीण।

चार विकथा

1 स्त्री कथा, 2 भोजन कथा, 3 देश कथा, 4 राज कथा।

छह ह्रद

1 पद्म ह्रद, 2 महापद्म ह्रद, 3 तिगिछ ह्रद, 4 केशरी ह्रद, 5 महापुण्डरीक ह्रद।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सप्त भय

1 इहलोक भय, 2 परलोक भय, 3 मरण भय, 4 वेदना भय, 5 अनुरक्षण भय, 6 अगुप्त भय, 7 अकस्मात् भय।

दान, शील, तप और भाव

दानं दुर्गतिनाशात् शीलं सद्गतिकारणं।
तपः कर्मविनाशाय भावना भवनाशनी ॥1॥

दान से दुर्गति का नाश होता है। यानि उत्तम गति प्राप्त होती है। शीलवान होने से अच्छी गति प्राप्त होकर अन्त में सुख की प्राप्ति होती है। तपाचरण से कर्म का नाश होता है और भाव से (श्रद्धा से) भवान्तर नाश होता है।

मरु देवी के देखे हुए सोलह स्वप्न

मातगगोहीर रमावर दानचन्द्र।
मार्तण्डमीन घट युग्मतडागसिंधुः
सिंहासनंचवरयानफणीन्द्रगेहं।
स्याद्रत्नराशिहुतभुक्षणदाभिराभा ॥1॥

1 हाथी, 2 गाय, 3 सिंह, 4 लक्ष्मी, 5 रत्नमाला, 6 चन्द्रमा, 7 सूर्य, 8 मत्स्य, 9 कुम्भजोड़, 10 तालाब (झील), 11 समुद्र, 12 सिंहासन, 13 विमान, 14 नागेन्द्र गृह, 15 रत्नराशि, 16 अग्नि ज्वाला।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सप्त व्यसन

तं मांसं सुरा वेश्या खेटं चौर्यं परांगना।
महापापानि सप्तानि व्यसनानि त्यजेत्बुध; ॥1॥

1 जुआ, 2 मांस, 3 मद्य, 4 वेश्यागमन, 5 शिकार, 6 चोरी, 7 पर-स्त्री-सेवन।

चौदह श्रोता

मृच्चालनी महिषहंसबकस्तु काकः।
मार्जार वैशुक जलूक सरंध्रकुम्भः॥
पाषाण शूर्प मशक-किल कामधेनुः।
एते हि वेद दशलक्षण मानवानां॥1॥

1 मिट्टी, 2 चालणी, 3 भैंस, 4 हंस, 5 बगला, 6 काक, 7 बिल्ली, 8 तोता, 9 जोंक, 10 कुम्भ (सछिद्र), 11 पाषाण, 12 सूप, 13 मशक (मछड़), 14 गाय।

इस प्रकार चौदह प्रकार के श्रोता हैं। इसमें उत्तम, मध्यम, जघन्य तीन प्रकार के हैं।

उत्तम—1 हंस, 2 गाय, 3 सूप, 4 तोता। मध्यम—1 सछिद्रकुम्भ, 2 मिट्टी, 3 चालणी, 4 मशक (मछड़), 5 तोता। जघन्य—1 पाषाण, 2 भैंस, 3 बिल्ली, 4 बगला, 5 कौआ, 6 जोंक। तोता उत्तम और मध्यम दोनों में ही समार्जेय है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सत्तावन आस्रव

पाप और पुण्य बंध होने के मार्ग को आश्रव कहते हैं। या कर्मबन्ध होने का जो द्वार है उसे आस्रव कहते हैं। अथवा मन, वचन, काय से होने वाली जो चलन क्रिया है, वह आस्रव है। आस्रव 57 प्रकार के हैं। उनमें चार प्रकार ये हैं—

1 मिथ्यात्व पांच, 2 अविरति बारह, 3 कषाय पच्चीस, 4 योग पंद्रह।

सब मिलकर 57 भेद हैं। उनके पृथक्करण।

1 पांच मिथ्यात्व

1 एकान्त मिथ्यात्व, 2 विपरीत मिथ्यात्व, 3 विनय मिथ्यात्व, 4 संयम मिथ्यात्व, 5 अज्ञान मिथ्यात्व।

2 बारह अविरति

इनके पांच प्रकार हैं—

1 पंचस्थावर, 2 एक त्रस, 3 पंचेन्द्रिय, 4 मन वश नहीं।

1 पंच स्थावर

1 पृथ्वी, 2 अप, 3 तेज, 4 वायु, 5 वनस्पति।

2 एक त्रस

1 द्विइन्द्रिय जीव, 2 तेइन्द्रिय जीव, 3 चौइन्द्रिय जीव, 4 पंचेन्द्रिय जीव।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

3 पंचेन्द्रिय

1 स्पर्श, 2 जिह्वा, 3 नाक, 4 आंख, 5 कान।

4 मन

मन वश नहीं।

3 कषाय पच्चीस

1. अनन्तानुबंधी 4-क्रोध, मान, माया, लोभ । 2. अप्रत्याख्यान 4-क्रोध, मान, माया, लोभ । 3 प्रत्याख्यान, 4-क्रोध, मान, माया, लोभ । 4. संज्वलन 4-क्रोध, मान, माया, लोभ। 5. हास्यादि 6-हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा। 6. वेद तीन—पुरुष वेद, स्त्री वेद, नपुंसक वेद ।

पन्द्रह योग

मनोयोग 4—सत्य मनोयोग, असत्य मनोयोग, उभय मनोयोग, अनुभय मनोयोग । वचनयोग 4—सत्य वचनयोग, असत्य वचनयोग, उभय वचनयोग, अनुभय वचनयोग। काययोग 7—औदारिक काययोग, औदारिकमिश्र काययोग, वैक्रियक काययोग, वैक्रियकमिश्र काययोग, आहारक काययोग, आहारक मिश्र काययोग, कार्मण काययोग ।

सत्तावन संवर

आश्रवों को रोकना संवर है । उनके छह भेद हैं—

1 तीन गुप्ति, 2 पांच समिति, 3 दश धर्म, 4 बारह अनुप्रेक्षा, 5 बाईस परिषह, 6 पांच चारित्र ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

1 तीन गुप्ति

1 मनोगुप्ति, 2 वचन गुप्ति, 3 काय गुप्ति ।

2 पांच समिति

1 ईर्या समिति, 2 भाषा समिति, 3 एषणा समिति, 4 आदान निक्षेपण समिति, 5 उत्सर्ग समिति ।

3 दश धर्म

1 क्षमा, 2 मार्दव, 3 आर्जव, 4 सत्य, 5 शौच, 6 संयम, 7 तप, 8 त्याग, 9 आकिंचन, 10 ब्रह्मचर्य ।

4 बारह अनुप्रेक्षा

1 अनित्य, 2 अशरण, 3 संसार, 4 एकत्व, 5 अन्यत्व, 6 अशुचि, 7 आस्रव, 8 संवर, 9 निर्जरा, 10 लोकानुप्रेक्षा, 11 बोधिदुर्लभानुप्रेक्षा, 12 धर्मानुप्रेक्षा ।

5 बाईस परिषह

1 क्षुधा, 2 तृष्णा, 3 शीत, 4 उष्ण, 5 दशमशक, 6 नग्नत्व, 7 आरति विरति, 8 स्त्रीकृतोद्रव, 9 चर्या, 10 निषद्या, 11 शय्या, 12 आक्रोश, 13 वध, 14 याचना, 15 अलाभ, 16 रोग, 17 तृण-स्पर्श, 18 मल, 19 सत्कार-पुरस्कार, 20 प्रज्ञा, 21 अज्ञान, 22 अदर्शन ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

6 पांच चारित्र

1 सामायिक, 2 छेदोपस्थापना, 3 परिहार विशुद्धि, 4 सूक्ष्म-सम्पराय, 5 यथाख्यात ।

पंचपरमेष्ठि के गुण

अरिहंता छय्याला सिद्धा अट्ठेव सूर छत्तीसा ।
उवझाया पणवीसं, साहूणं हुन्ति अडवीसा ।।5।।

1 अरिहन्त के गुण 46, 2 सिद्ध के गुण 8, 3 आचार्य के गुण-36, 4 उपाध्याय के गुण 25, 5 सर्व साधु के गुण 28-सब मिलाकर 143 गुण हैं।

1 अरिहन्त के गुण

वर अइशय चौंतीसा अट्ठ महापाडि ठोई संयुत्ता ।
अनन्त चऊ य सहिय्या छय्याला अर्हन्तगुण भणिया ।।2।।

अतिशय 34, प्रातिहार्य 8, अनन्तचतुष्टय 4, सब मिलाकर 46 गुण हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

चौंतीस अतिशय

1. जन्म के दस अतिशय

णिस्वेदं मलरहियं क्षीरं गौरंच वज्ज समचतुरं।
सोभा सुगंध लक्खं अणंतवीर्यं पियहियसहियं ॥3॥

1 शरीर स्वेद (पसीना) रहित, 2 मलमूत्ररहित, 3 खून दूध के समान, 4 वज्रवृषभनाराचसंदृतन, 5 समचतुर संस्थान, 6 बहुत सुन्दर, 7 लक्षण 1008, 8 शरीर सुगंधित, 9 अनन्त बल, 10 मिष्ट वचन।

2. केवलज्ञान के दस अतिशय

सुभिक्खं णभगमणं अहिंसा उवसग्गर रहित मुखचऊवं।
छायाण णेत्र आमलं आहार णखरहियो विद्येसो ॥4॥

1 सौ योजन सुभिक्ष, 2 उपसर्गरहित, 3 आकाश में गमन, 4 समवशरण में प्राणी अमरत्व, 5 आहार रहित, 6 चतुर्मुख दर्शन, 7 समस्त विद्या का स्वामी, 8 छायारहित, 9 नेत्र की पलक न लगना, 10 बाल-नाखून न बढ़ना।

3. देवकृत चौदह अतिशय

मागद्धि सव्व मिय पुप्फं फलच भूमि आरितयं।
वर सुगंधीय सोहं परम सुहं सव्य जंतुणं ॥5॥
सव्वम जण सतोसह गंधोदय पण्णासधाण्यणिप्पति।
पहदिसपुज्ज्जल सोहे देवागम धम्मचक्कीणं ॥6॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

1 सब अर्थ में मागधी भाषा, 2 सर्व जीव पर एक भाव, 3 छह ऋतुओं के फल-फूल, 4 सीसा के समान भूमि, 5 सुवासित वायु, 6 सर्व जीव को आनन्द, 7 एक योजन तक भूमि शुद्धि, 8 गंधोदक वृष्टि, 9 चरण के नीचे कमल रचना, 10 आकाश साफ, 11 जय-जय शब्द की ध्वनि, 12 धर्म के सम्मुख चलना, 13 वायुकुमार के पंखा मारना, 14 अष्ट द्रव्य के आगे चलना।

4. अष्ट प्रातिहार्य

असोगं सुर पुप्फं दिव्यध्वनि चामर दुंदुभीणं च।
भामंडल सिंहासन छत्तत्तिय सोहे जिणंदाणं ॥7॥

1 अशोक वृक्ष, 2 सुरपुष्प वृष्टि, 3 दिव्य ध्वनि, 4 चामर, 5 दुंदुभिवाद्य, 6 भामंडल, 7 सिंहासन, 8 छत्र तीन।

चार अनन्त चतुष्टय

अणंतदस्सी देवो णाणं सौक्खं अणंत वीयणं।
एवं गुणसंयुत्ता सहियं वादं अणंतकालेणं ॥8॥

1 अनन्त दर्शन, 2 अनन्त ज्ञान, 3 अनन्त सुख, 4 अनन्त वीर्य, ऐसे सब मिलकर अरिहन्त के 49 गुण हैं।

अठारह दोषरहित अरिहन्त

क्षुधातृष्णाभयद्वेषराग मोहाश्च मृत्युश्च चिन्तनं।
जरारुजश्च मृत्युश्च खेदस्वेदमदो रतिः ॥9॥
विस्मयो जननं निद्रा विषादोऽष्टादश ध्रुवं।
एतैर्दोषैर्विनिर्मुक्तः सोऽयमाप्तो जिनेश्वरः ॥10॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

1 क्षुधा, 2 तृषा, 3 भय, 4 द्वेष, 5 राग, 6 मोह, 7 चिन्ता, 8 जरा, 9 मृत्यु, 10 खेद, 11 स्वेद, 12 मद, 13 रति, 14 विस्मय, 15 जन्म, 16 निद्रा, 17 रोग, 18 शोक।

इसी प्रकार अठारह दोष रहित जो हैं, उन्हें अरिहन्त जानना चाहिए।

सिद्ध के आठ गुण

सम्मत णाणं दंसण वीर्यं सुहमंत हेव अवगहणं।
अगुरुलघु मध्वावाहं अट्ठगुणा होई सिद्धणं ॥11॥

1 सम्यकदर्शन, 2 केवलज्ञान, 3 केवल दर्शन, 4 वीर्य (पराक्रम), 5 सूक्ष्मत्व, 6 अवगाहण, 7 अगुरुलघुत्व, 8 अव्याबाधत्व।

आचार्य के छत्तीस गुण

बारह तव छावस्सया पंचाचार तहेव दह दम्मा।
गुत्तित्तय सजुत्ता छत्तीसगुणा हुन्ति आयरिया ॥12॥

1 बारह तप, 2 आवश्यक छह, 3 पांच पंचाचार, 4 दश धर्म, 5 तीन गुप्ति। सब मिलकर 36 गुण हैं।

1. बारह तप

1 अनशन, 2 ऊनोदर, अनमौदर्य, 3 व्रतपरिसंख्यान, 4 रसपरित्याग, 5 भूमिशयन, 6 कायक्लेश ये बाह्य तप, 7 प्रायश्चित, 8 विनय, 9 वैय्याव्रत, 10 स्वाध्याय, 11 कायोत्सर्ग, 12 ध्यान—ये आभ्यन्तर तप हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

2. छह् आवश्यक

1 सामयिक, 2 स्तवन, 3 वन्दन, 4 प्रतिक्रमण, 5 कायोत्सर्ग, 6 स्वाध्याय ।

3. पांच पंचाचार

1 दर्शनाचार, 2 ज्ञानाचार, 3 चारित्राचार, 4 तपाचार, 5 वीर्याचार।

4. दस धर्म

1 उत्तम क्षमा, 2 मार्दव, 3 आर्जव, 4 सत्य, 5 शौच, 6 संयम, 7 तप, 8 त्याग, 9 आकिंचन, 10 ब्रह्मचर्य ।

5. तीन गुप्ति

1 मनोगुप्ति, 2 वचनगुप्ति, 3 कायगुप्ति—इसी प्रकार 36 गुण आचार्य के हैं ।

उपाध्याय के पच्चीस गुण

इगा अंगे सहिया चौदस पुब्बे य सेसाण ।
पणविसागुणजुत्ता अण्णा सस्स उवझाया।

11 अंग और 14 पूर्व । इसी तरह मिलकर 25 गुण हैं।

अंग ग्यारह

1 आचारांग, 2 सूत्रांग, 3 स्थानांग, 4 समवायांग, 5 व्याख्या-

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

प्रज्ञप्तांग, 6 ज्ञातृकथांग, 7 उपासकाध्ययनांग, 8 अन्तकृतांग, 9 अनुत्तरांग, 10 प्रश्नव्याकरणांग, 11 विपाकसूत्रांग।

चौदह पूर्व

1 उत्पादपूर्व, 2 आग्रायणो, 3 वीर्यानुवाद, 4 अस्तिनास्ति 5 ज्ञानप्रवाद, 6 सत्यप्रवाद, 7 आत्मप्रवाद, 8 कर्मप्रवाद, 9 प्रत्याख्यान, 10 विद्यानुवाद, 11 कल्याणवाद, 12 प्राणानुवाद, 13 क्रियाविशालवाद, 14 लोकबिन्दु। इसी प्रकार, 25 गुण जानना चाहिए।

सर्व साधुओं के गुण अट्ठाईस

1 पांच महाव्रत, 2 पंचसमिति, 3 पंचेन्द्रियरोध, 4 आवश्यक, 5 लोंच, 6-भूमिशयनादि।

1. पंच महाव्रत

1 अहिंसा महाव्रत, 2 सत्य महाव्रत, 3 अचौर्य महाव्रत, 4 ब्रह्मचर्य महाव्रत, 5 परिग्रहत्याग महाव्रत।

2. पंच समिति

1 ईर्या समिति, 2 भाषा समिति, 3 एषणा समिति, 4 आदान-निक्षेपण समिति, 5 व्युत्सर्ग समिति।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

3. पंचेन्द्रियरोध

1. शरीर, 2. जिह्वा, 3. नासिका, 4. आंख, 5. कान—इन पंचेन्द्रिय को वश करना, इसको पंचेन्द्रियरोध कहते हैं।

4. आवश्यक छह

1 सामायिक, 2 स्वतन, 3 वन्दन, 4 स्वाध्याय, 5 प्रतिक्रमण 6 कायोत्सर्ग।

5. शेष सात गुण

1 केशलोंच, 2 नग्नत्व, 3 अस्नान, 4 भूमिशयन, 5 दांत न धोना, 6 खड़गासन भोजन, 7 एक भुक्ति—ऐसे 28 गुण सर्व साधुओं के हैं।

दश कल्पवृक्ष

1 मद्यांग—मधुर उत्तम प्रकार का रस देने वाला, 2 तुर्यांग—भेरी आदि नाना प्रकार के वाद्य देने वाला, 3 भूषणांग—नाना प्रकार की रत्नादि माला देता है। 4 कुसुमांग—हर एकैक प्रकार की पुष्प माला देता है। 5 दीप्यांग—चन्द्र के समान शीत ज्योति देने वाला। 6 जोतिराग—सूरज के समान प्रकाश देने वाला। 7 गृहांग—हर एकेक प्रकार के घर देता है। 8 भोजनांग—पंचामृतादि षटरस भोजन देने वाला। 9 भाजनांग—नाना प्रकार के बर्तन देने वाला है। 10 वस्त्रांग—उत्तम प्रकार के रेशमी वस्त्र देने वाला है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

आठ कर्म और उनकी १४८ प्रकृतियां

आठ कर्म

1 ज्ञानावरणीय, 2 दर्शनावरणीय, 3 मोहनीय, 4 अन्तराय चार घातिया कर्म 5 नाम, 6 गोत्र, 7 आयु, 8 वेदनीय—ये चार अघातिया कर्म हैं।

१४८ प्रकृतियां

1 ज्ञानावरणीय कर्म की नव प्रकृतियां

1 मतिज्ञानावरणीय, 2 श्रुतज्ञानावरणीय, 3 अवधि-ज्ञानावरणीय, 4 मन: पर्ययज्ञानावरणीय, 5 केवलज्ञानावरणीय।

2 दर्शनावरणीय कर्म की नव प्रकृतियां

1 चक्षुदर्शनावरणीय, 2 अचक्षुदर्शनावरणीय 3 अवधि-दर्शनावरणीय, 4 केवलदर्शनावरणीय, 5 निद्रादर्शनावरणीय, 6 निद्रादर्शनावरणीय,7 प्रचला दर्शनावरणीय, 8 प्रचला-प्रचला दर्शनावरणीय स्थानवृद्धि।

3. मोहनीय कर्म की 28 प्रकृतियां

इनके 2 भेद हैं—1 दर्शन मोहनी, 2 चारित्र मोहनी।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

1. दर्शन मोहनीय प्रकृतियां तीन

1 मिथ्यात्व दर्शन मोहनीय, 2 सम्यक्त्व मिथ्यात्व दर्शन मोहनीय, 3 सम्यक्त्व दर्शन मोहनीय ।

2. चारित्र मोहनीय प्रकृतियां पचीस

1 अनन्तानुबंधी—क्रोध, मान, माया, लोभ, 2 अप्रत्यख्यान—क्रोध, मान, माया, लोभ, 3 प्रत्याख्यान—क्रोध, मान, माया, लोभ, 4 संज्वलन—क्रोध, मान, माया, लोभ ।

3. नौ कषाय

1 हास्य, 2 रति, 3 अरति, 4 शोक, 5 भय, 6 जगुप्सा 7 स्त्रीवेद, 8 पुरुषदेद, 9 नंपुसकवेद ।

इसी प्रकार चारित्र मोहनीय की 25 प्रकृतियां हैं ।

4. अन्तराय पांच प्रकृतियां

1 दानान्तराय, 2 लाभान्तरण, 3 भोगान्तराय, 4 उपभोगान्तराय, 5 वीर्यान्तराय ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

5. नाम तिरानबे प्रकृतियां

4 गति—1 देवगति, 2 मनुष्यगति, 3 तीर्यंचगति, 4 नरकगति। 5 जाति—एकेन्द्रियजाति, 2 द्वींद्रियजाति, 3 त्रीन्द्रियजाति, 4 चतुरइन्द्रियजाति, 5 पंचेन्द्रियजाति। 5 शरीर—1 औदारिक शरीर, 2 वैक्रियक शरीर, 3 आहारक शरीर, 4 तैजस शरीर, 5 कार्मण शरीर 2, 3 आंगोपांग—1 औदारिक आंगोपांग, वैक्रियक आंगोपांग, 3 आहारक आंगोपांग, 5 बन्धन—1 औदारिक बन्धन, 2 वैक्रियक बन्धन, 3 आहारक बन्धन, 4 तैजस बन्धन 5 कार्मण बन्धन। 5 संघात—1 औदारिक संघात, 2 वैक्रियक संघात, 3 आहारक संघात, 4 तैजस संघात, 5 कार्मण संघात। 5 संहनन—1 वज्रवृषभनाराच संहनन, 2 वज्रवनाराच संहनन, 3 नाराच संहनन, 4 अर्द्धनाराच, 5 कीलक संहनन, 6 असंप्राप्ता सृपाटिका संहनन। 6 संस्थान—समचतुस्रसंस्थान, 2 न्यग्रोध परिमंडल संस्थान, 3 स्वाति संस्थान, 4 वामन संस्थान, 5 कुब्जक संस्थान, 6 हुंडक संस्थान। पांच वर्ण—1 काला, 2 हरा, 3 पीला, 4 लाल, 5 सफेद। 2—गन्ध—1 सुगन्ध, 2 दुर्गन्ध। रस 5—1 खट्टा, 2 मीठा, 3 कषायला, 4 तिक्त, 5 कड़ुआ। स्पर्श 8—1 कोमल, 2 शीत, 3 उष्ण, 4 हल्का, 5 भारी, 6 रूक्ष, 7 चिकना, 8 कठोर। अनुपूर्वी 4—1 देवानुपूर्वी, 2 मनुष्यानुपूर्वी, 3 तीर्यंचानुपूर्वी, 4 नरकानुपूर्वी। स्थान नाम कर्म 2—1 प्रमाण स्थान, 2 निर्णय स्थान। परघात, उपघात, उच्छ्वास, आतप, ऊधोत, अगुरुलघु, विहायोगति, त्रस-स्थावर, बादर-सूक्ष्म, पर्याप्त-अपर्याप्त, प्रत्येक-साधारण, स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुभग-दुर्भग, सुस्वर-दुस्वर आदेय-अनादेय, यशःकीर्ति-अयशःकीर्ति, तीर्थंकरत्व। इसी प्रकार 93 नाम कर्म प्रकृतियां हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

6. गोत्र दो

1. उच्च गोत्र, 2. नीच गोत्र ।

7. आयु चार

1. देवायु, 2. मनुष्यायु, 3. तिर्यंचायु, 4. नरकायु ।

8. वेदनीय दो

1. साता वेदनीय, 2. असाता वेदनीय ।

इसी प्रकार आठ प्रधान कर्म हैं और इनकी 148 प्रकृतियां हैं ।

सर्वघाती प्रकृतियां इक्कीस

जो आत्मा के गुण के सर्व घाते वह सर्वघाती है। प्रकृतियां : ज्ञानावरणीय 1 (केवलज्ञानावरणीय), दर्शनावरणीय 6 (केवल दर्शन, निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला, स्थानवृद्धि), मोहनीय 14 (अनन्तानुबन्धी 4—क्रोध, मान, माया, लोभ, अप्रत्याख्यान 4—क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रत्याख्यान, 4—क्रोध, मान, माया, लोभ, खिथ्यात्व, समयक्त्वमिथ्यात्व) ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

देशघाती प्रकृतियां छब्बीस

जो आत्मा के गुण के एक देश घाते वह देशघाती है। प्रकृतियां—ज्ञानावरणीय 4 (मतिज्ञान, श्रुतिज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान), दर्शनावरणीय 3 (चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधि-दर्शन), मोहनीय 14 (संज्वलन—क्रोध, मान, माया, लोभ, नौ कषाय—हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंकस वेद, सम्यक्त्व प्रकृति ।), अन्तराय 5—(लाभान्तराय, भोगान्तराय, उपभोगान्तराय, दानान्तराय, वीर्यान्तराय)

सम्यग्दर्शन

श्रद्धानं परमार्थानामाप्तागमतपोभृताम् ॥
त्रिमूढ़ापोढमष्टांगं सम्यग्दर्शनमस्मयम् ॥1॥

सच्चादेव, गुरु और शास्त्र का तीन मूढ़तारहित, अष्ट अंग सहित आठ मद रहित श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है।

निसर्गज और अधिगमज के भेद दो प्रकार हैं। जो स्वभाव से हो वह निसर्गज, जो परोपदेश से हो वह अधिगमज हैं। श्रद्धान को भी सम्यग्दर्शन कहते हैं, वह सम्यग्दर्शन उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक के भेद से तीन प्रकार का है।

1 प्रथमोपशम सम्यक्त्व—अनादि मिथ्यादृष्टि के पांच और आदि मिथ्यादृष्टि के सात प्रकृतियों के उपशम से हो, उसको प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहते हैं।

2 द्वितियोपशम सम्यक्त्व—सातवें गुण स्थान में क्षायोप-शमिक सम्यग्दृष्टि जीव श्रेणी चढ़ने के सम्मुख अवस्था में अनन्ता-

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

नुबन्धी चतुष्टय का विसंयोजन (अप्रत्याख्यानादिरूप) करके दर्शन मोहनीय की तीनों प्रकृतियों का उपशम करके जो सम्यक्त्व प्राप्त करता है उसको द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहते हैं।

इसी प्रकार उपशम सम्यक्त्व के दो भेद होते हैं।

1 उपशम—दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृति और अनन्तानुबन्धी की 4 प्रकृति इस प्रकार सात प्रकृतियों के उपशम होने से जो उत्पन्न हो वह उपशमसम्यक्त्व कहलाता है।

2 क्षायिकसम्यक्त्व—जो सात प्रकृतियों के क्षय होने से उत्पन्न होता हो उसको क्षायिकसम्यक्त्व कहते हैं।

3 क्षायोपशमिकसम्यक्त्व—प्रकृतियों के अनुदय और सम्यक्त्व प्रकृति नामक मिथ्यात्व के उदय से जो हो, उसको क्षायोपशमिक सम्यक्त्व कहते हैं।

सम्यग्दर्शन के आठ अंग

1 निःशांकित—जिनेन्द्र भगवान के कहे हुए जीवादि तत्त्व में शंका (सन्देह) नहीं करना।

2 निःकांक्षित—व्रतोपवासादि करके परलोक तथा इहलोक के सुखों की वांछा नहीं करना।

3 निर्विचिकित्सा—मुनि, त्यागी, व्रति के मलिन शरीर को देखकर घृणा नहीं करना।

4 अमूढ़दृष्टि—अच्छे-बुरे तत्त्व को पहचान कर मूढ़ता की ओर नहीं आना।

5 उपगूहण—अपने गुणों को और दूसरों के अवगुणों को प्रकट नहीं करना।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

6 स्थितिकरण—जो धर्म से पतित है या पतित हो रहा है, ऐसे अपने को और दूसरों को पुनः धर्म के स्व-पर को स्थिर कर देना।

7 वात्सल्य—गौवत्स की तरह पंचपरमेष्ठियों में और उनकी प्रतिमाओं में, जिन मन्दिर, चतुर्विधिसंग और शास्त्र सबके प्रति स्नेह रखना वात्सल्यांग है।

8 प्रभावना—अज्ञान रूपी अन्धकार को जिस प्रकार भी बन सके दूर करके जिनेन्द्र भगवान के शासन के माहात्म्य को प्रकाशित करना अर्थात् फैलाना प्रभावनांग है।

भाव

जीव के निज के भाव पांच हैं अर्थात जीव को छोड़कर अन्य किसी में नहीं पाये जाते हैं। 1 (उपशम) औपशमिक भाव, 2 क्षायिक भाव (क्षय), 3 क्षायोपशमिक भाव (क्षायोपशम, मिश्र) 4 औदयिक भाव (उदय), 5 पारिणामिक भाव—इस प्रकार पांच भाव हैं और उनमें भेद—

औपशमिक भाव

1 औपशमिक सम्यक्त्व, 2 औपशमिक चारित्र।

2. क्षायिक भाव के नौ भेद

1 केवल ज्ञान, 2 केवल दर्शन, 3 क्षायिकदान, 4 क्षायिक-लाभ, 5 क्षायिक भोग, 6 क्षायिक उपभोग, 7 क्षायिकवीर्य, 8 क्षायिकसम्यक्त्व, 9 क्षायिक चारित्र। इन नौ भावों को नौ लब्धियां भी कहते हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

3. क्षायोपशमिक भाव के अट्ठारह भेद

चार ज्ञान—1 मति, 2 श्रुति, 3 अवधि, 4 मनःपर्यव । तीन अज्ञान—1 कुमति, 2 कुश्रुत, 3 कुअवधि (विभंग) । 3 दर्शन—1 चक्षुदर्शन, 2 अचक्षुदर्शन; 3 अवधिदर्शन । पांच लब्धियां—क्षायोपशमिक दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य। क्षायोपशमिक सम्यक्त्व, क्षायोपशमिक चारित्र, संयमासंयम ।

4. औदारिक भाव इक्कीस

गति चार—नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव । कषाय चार—क्रोध, मान, माया, लोभ । लिंग तीन– स्त्री, पुरुष, नपुंसक । मिथ्यादर्शन, अज्ञान, असंयत, असिद्धत्व, लेश्या 6—कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म, शुक्ल ।

पारिणामिक भाव तीन

1 जीवत्व, 2 भव्यत्व, 3 अभव्यत्व ।

काय छह

1 पृथ्वी काय, 2 जल काय, 3 अग्नि काय, 4 वायु काय, 5 वनस्पति काय, 6 त्रस काय ।

संयम सात

1 असंयम, संयमासंयम, 3 सामायिक, 4 छेदोपस्थापन, 5 परिहार विशुद्धि, 6 सूक्ष्मसम्पराय, 7 यथाख्यात

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

संज्ञी दो

1 संज्ञी, 2 असंज्ञी।

आहारक दो

1 आहारक—संसारी जीव हमेशा आहारक है।

2 अनाहारक—एक शरीर छोड़कर दूसरे शरीर धारण करने तक जो बीच में समय लगता है (विग्रहगति) उसी समय अनाहारक। संयोग केवली समुद्घात करते समय अनाहारक।

गुणस्थान चौदह

1 मिथ्यात्व, 2 सासादन, 3 मिश्र, 4 अव्रत, 5 अणुव्रत, 6 प्रमत्त, 7 अप्रमत्त, 8 अपूर्वकरण, 9 अनिवृत्तिकरण 10 सूक्ष्म-सांपराय, 11 उपशान्तमोह, 12 क्षीणमोह, 13 संयोगकेवली, 14 अयोगकेवली।

पर्याप्ति छह

1 आहार, 2 शरीर, 3 इन्द्रिय, 4 श्वासोछ्वास, 5 भाषा, 6 मन। एकिंद्रिय के चार आदि की पर्याप्ति द्वीन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय के पांच पर्याप्ति (मन छोड़कर) संज्ञी पंचेन्द्रिय के 6 पर्याप्ति होती है।

प्राण दस

1-5 इन्द्रिय प्राण, 6 मनोबल, 7 वचनबल, 8 कायबल, 9 श्वासोश्वास-प्राण, 10 आयु प्राण।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

1 इन्द्रिय के 4 प्राण (1 इन्द्रिय, कायबल, श्वासोछ्वास आयु) 2 इन्द्रिय के 6 प्राण (2 इन्द्रिय काय, बचन, आयु श्वासोछ्वास) 3 इन्द्रिय के 7 प्राण (1 इन्द्रिय बट गया) 4 इन्द्रिय के 8 प्राण (जिसमें फिर एक इन्द्रिय ज्यादा) असैनी पंचेन्द्रिय 9 प्राण (5 इन्द्रिय, वचन, काय, आयु, श्वासोछ्वास)।

सैनी पंचेन्द्रिय के 10 प्राण (5 मन सहित) हैं।

संज्ञा चार

1 आहार संज्ञा, 2 भय संज्ञा, 3 मैथुन संज्ञा, 4 परिग्रह संज्ञा।

उपभोग बारह

ज्ञानोपयोग 12 दर्शनोपयोग 4 (जो ज्ञान 8 व दर्शन 4 है वही उपभोग।)

ध्यान सोलह

1 आर्तध्यान 4—1 इष्टवियोग, 2 अनिष्ट संयोग, 3 पीड़ा-चिन्तन, 4 निदानबंध। 2 रौद्रध्यान 4—1 हिंसानन्द 2 मृषानंद, 3 चौर्यानंद, 4 परिग्रहानंद। 3 धर्मध्यान 4—आज्ञाविचय 2 अपाय विचय, 3 विपाक विचय, 4 संस्थान विचय। शुक्ल-ध्यान--1 पृथक्त्ववितर्क, 2 एकत्ववितर्क, 3 सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति, 4 व्युपरतक्रियानिवृत्ति। इसी प्रकार ध्यान के 16 भेद होते हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

साम्परायिक आश्रव के उन्तालीस भेद

1 ईर्यापथ आश्रव—कषाय रहित जीवों के ईर्यापथ आश्रव होता है। स्थित और अनुभाग रहित कर्मों के आश्रव को ईर्यापथ कहते हैं। 11वें से 13वें गुणस्थान तक जीवों के ईर्यापथ आश्रव होता है।

2 साम्परायिक आश्रव—योग-कषाय सहित जीवों के होता है। जिस आश्रव का संसार ही प्रयोजन है। उसे साम्परायिक आश्रव कहते हैं 1 से लेकर 10 गुणस्थान तक यही आश्रव है। उसके 39 भेद के हैं।

1 इन्द्रिय—स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, कर्ण।

2 कषाय—क्रोध, मान, माया, लोभ। 3 कषाय—हिंसा, असत्य, चौर्य, कुशील, परिग्रह। क्रिया (25), सम्यक्त्व मिथ्यात्व, प्रयोग, समाधान, ईर्यापथ, प्रदोषिकी, कायिकी, अधिकरण, पारितापिकी, प्राणातिपातिनी, दर्शन, स्पर्शन, प्रात्ययिकी, समन्तानुगत, जनाभोग, स्वहस्त, निसर्ग, विवारण, आज्ञा-व्यापादिकी, अनाकांक्षा, प्रारम्भ, पारिग्रहिकी, माया, मिथ्या-दर्शन, अप्रत्याख्यान।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

6. षट् द्रव्य

1 जीव, 2 पुद्गल, 3 धर्म, 4 अधर्म, 5 आकाश, 6 काल ।

विशेष भेद 57—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, नित्यनिगोद इतरनिगोद इन छः के बादर और सूक्ष्म के भेद से 12 । प्रत्येक के दो भेद—1 सप्रतिष्ठित, 1 अप्रतिष्ठित और 2 इन्द्रिय, 3 इन्द्रिय, 4 इन्द्रिय, असंज्ञा, संज्ञी एवं त्रस के पांच भेद हैं । सब मिलाकर 19 भेद होते हैं । ये सभी पर्याप्त, निवृत्य पर्याप्त, लब्ध्यपर्याप्तक होते हैं । अतः 19 का 3 के साथ गुणा करने पर जीव समाज के उत्तर भेद 57 होते हैं । इनके और विशेष भेदों को जानने के लिए गोमट सार ग्रंथ से जानना चाहिए ।

मार्गणा—जिन-जिन धर्म विशेषों से जीवों का अन्वेषण (खोज) किया जाय, उन-उन धर्म विशेषों को मार्गणा कहते हैं। ये 14 हैं—1 गति, 2 इन्द्रिय, 3 काय, 4 योग, 5 वेद, 6 कषाय, 7 ज्ञान, 8 संयम, 9 दर्शन, 10 लेश्या, 11 अन्यत्व, 12 सम्यक्त्व, 13 संज्ञित्व, 14 आहार । इनका विशेष ज्ञान प्राप्त करने के लिए चौबीस ठांणा, चौंतीस दर्शन स्थान ग्रंथों से जानना चाहिए ।

ष ् द्रव्य में यह काल द्रव्य छठा है । काल के दो भाग हैं। 1 व्यवहार काल—मिनट, घण्टा, दिन, मास, साल, यह व्यवहार काल हैं । 2 निश्चय काल—अवसर्पिणीकाल, उत्सर्पिणी काल—इनको निश्चय काल कहते हैं ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अवसर्पिणीकाल के छह भेद—1 सुषमा सुषमा 2 सुषमा 3 सुषमा दु:षमा, 4 दु:षमा सुषमा, 5 दु:षमा 6 दुषमा दु:षमा। उत्सर्पिणी काल के भी छह भेद, विपरीत क्रम से हैं—

1 दु:षमा दु:षमा, 2 दु:षमा, 3 दु:षमा सुषमा, 4 सुषमा दु:षमा, 5 सुषमा और 6 सुषमा सुषमा। सुषमा सुषमा का प्रमाण चार कोड़ा-कोड़ी सागर है। सुषमा का प्रमाण तीन कोड़ा-कोड़ी सागर। सुषमा-दु:षमा का प्रमाण दो कोड़ा-कोड़ी सागर है। दु:षमा सुषमा का प्रमाण 42000 वर्ष कम एक कोड़ा-कोड़ी सागर है।

दु:षमा का प्रमाण 21000 वर्ष है, तथा दु:षमा दु:षमा का भी प्रमाण 21000 वर्ष है। पांच मेरु सम्बन्धी पांच भरत क्षेत्र तथा 5 ऐरावत क्षेत्रों में अवसर्पिणी उत्सर्पिणी के छह-छह कालोंके द्वारा तहां वाले जीवों के आयु शरीर बल वैभवादिक की हानि-वृद्धि होती है।

अवसर्पिणी के छहों कालों में क्रम से घटते हैं और उत्सर्पिणी के छहों कालों में क्रम से बढ़ते हैं। अवसर्पिणी काल के प्रथम कला की आदि में जीवों की आयु तीन पल्य प्रमाण है और अन्त में दो पल्य प्रमाण है। दूसरे काल के आदि में दो पल्य और अन्त में एक पल्य प्रमाण है। तीसरे काल की एक पल्य और अन्त में एक कोटि पूर्व (चौरासी लाख वर्ष का एक पूर्वांग और चौरासी लाख पूर्वांग का एक कोटिपूर्ण होता है।) वर्ष प्रमाण है। चतुर्थकाल के आदि में कोटिपूर्व और अन्त में 120 वर्ष है। पांचवें काल के आदि में 120 वर्ष, अन्त में 20 वर्ष है। छठे काल के आदि में 20 वर्ष है और अन्त में 15 वर्ष हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

इस छठे काल के अन्त में सात-सात दिन पर्यन्त क्रम से 1 पवन, 2 अत्यन्त शीत, 3 क्षाररस, 4 विष, 5 कठोर अग्नि, 6 धूल और 7 धुआं, इस प्रकार 49 दिन में वृष्टियां होती हैं। जिससे अवशिष्ट मनुष्यादिक जीव नष्ट हो जाते हैं तथा विष और अग्नि वर्षा से पृथ्वी एक योजन तक चूर-चूर हो जाती है। इसी का नाम महाप्रलय है। यहां इतना जानना कि यहां महाप्रलय भरत और ऐरावत क्षेत्रों के आर्य खण्डों में ही होती है। अन्यत्र नहीं होती है। अब आगे उत्सर्पिणी काल के प्रवेश का अनुक्रम कहते हैं।

उत्सर्पिणी के दुःषमा दुःषमा नामक प्रथम काल में सबसे पहले सात दिन जलवृष्टि, सात दिन दुग्ध वृष्टि, सात दिन घृत-वृष्टि, सात दिन तक अमृतवृष्टि होती है। जिससे पृथ्वी में पहले अग्नि आदिक की वृष्टि से जो ऊष्णता हुई थी वह चली जाती है और पृथ्वी कान्तियुक्त सच्चिकन हो जाती है। जलादिक की वर्षा से नाना प्रकार के लतावेलि विविध ओषधियां तथा गुल्म वृक्षादिक वनस्पति, उत्पत्ति तथा वृद्धि को प्राप्त होती हैं। इस समय पृथ्वी की शीतलता तथा सुगंधिता के निमित्त से पहले जो प्राणी विजयार्थ तथा गंगा-सिन्धु नदी की वेदियों के बिलों में पहुंच गए थे। वे पृथ्वी पर आकर जहां-तहां बस जाते हैं। इस काल में मनुष्य धर्मरहित नग्न रहते हैं और मृत्तिका आदि का आहार करते हैं।

इस काल में जीवों की आयु कायाधिक क्रम से बढ़ते हैं। इसके पीछे उत्सर्पिणी काल दुःषमा नामक दूसरा काल प्रवर्तता है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्रावक की तिरेपन क्रियाएं

1 मूलगुण—5 उदम्बर-बड़, पीपल, ऊमर, कठूम्बर, पाकर फलों का त्याग, मद्य, मांस, मधु तीन प्रकार का त्याग।

2. 12 व्रत, 5 अणुव्रत, 3 गुणव्रत, शिक्षाव्रत।

3. 12 तप--अनशन, ऊनोदर, व्रत परिसंख्यान, रस परित्याग विव्यक्ति शैयाशन, कायक्लेश, प्रायश्चित विचय वैयाव्रत स्वाध्याय, व्युत्सर्ग, ध्यान।

4. 11 प्रतिमा

5. रत्नत्रय

6. 4 दान

7. 1 समता

8. 1 पानी छान करके पीना

9. 1 रात्रि भोजन का त्याग

षट्रस

दूध, दही, घी, नमक, मीठा, तेल

रविवार को नमक त्याग

सोमवार को हरी का त्याग

मंगल को मीठा का त्याग

बुधवार को घी का त्याग

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

गुरुवार को दूध का त्याग
शुक्रवार को दही का त्याग
शनिवार को तैल का त्याग एवं इसी प्रकार षट्रस का त्याग कहा गया ।

दर्शने स्नानमाप्नोति, स्पर्शने च दिनत्रयम् ।
धारिते सप्तरात्रं तु, सूत्रकं परिवर्जयेत् ।।1।।

प्रेत देखने के बाद स्नान करना स्पर्श से (छूने के बाद) तीन दिन रात्रि सूतक, प्रेत ले जाने से (जाने वाले को) सात दिन रात्रि सूतक छूट जाता है ।

गर्भपात होने के बाद गर्भ स्त्री को, जितने मास होने के बाद गर्भ गल जाता है, उतने दिन तक सूतक । जैसे—3 महीना का हो तो तीन दिन, 6 महीना का हो तो 6 दिन लेकिन सात महीने के बाद हो तो पूर्ण सूतक लगता है । आगे आठ नौ महीने में हो जाय तो मां को पूरा सूतक और परिवार को एक दिन सूतक लगता है ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

चौबीस दण्डक

वन्दों के वीर सुधीर को, महावीर गम्भीर।
वर्धमान सन्मति महा, देवाधिदेव अतिवीर ।।1।।

गत्यागत्य प्रकाश के, गत्यागत्य व्यतीर।
अद्‌भुत अतिगति सुगति जो जैनसूर जगदीश ।।2।।

वाकी भक्ति बिना विफल, गये अनन्ते काल।
अगणित गत्यागति धरी, कटौ न जग जंजाल ।।3।।

चौबीसों दण्डक विषै, धरी अनन्ती देह।
नाहो लखियो ज्ञान धन, शुद्ध स्वरूप विदेह ।।4।।

जिनवानी परसादतें, लहिए आतमज्ञान।
दहिये गत्यागत्य सर्व, गहिये पद निर्वाण ।।5।।

चौबीस दण्डकतनी, गत्यागति सुन लेव।
सुनकर विरक्ति भाव धरि चहुंगति पानी देव ।।6।।

पहला दण्डक नरक, भवनवासी दस, ज्योतिष, व्यन्तर, कल्पवासी, पांच स्थावर विकलत्रय (2 इन्द्रिय, 3 इन्द्रिय, 4 इन्द्रिय) और मनुष्य और तिर्यंच (पंचेन्द्रिय धारक)।

पहले नरक गति और आगति दो प्रकार हैं। मनुष्य और तिर्यंच पंचेन्द्रिय। असैंनी पहले नरक तक जाता है क्योंकि मनके बिना अधिक अभाव हिंसा का है। सरीसृप चौथे नरक तक, बाघ (नाहर) पंचम नरक तक, नारी षष्ठम् नरक तक, मनुष्य

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

और महामच्छ सातवें नरक तक गमन करते हैं।

आगति—सातवें नरक का जीव क्रूर पशु होता है, छठे नरक से मनुष्य और पशु होता है। छठे से निकलकर सम्यक्ति होता है। पांचवें नरक से निकला मुनि, चौथे से केवली होता है, तीसरे से निकलकर तीर्थंकर होता है। इस प्रकार नरक गति की आगति जिनवाणी में कही गयी है।

देव की गत्यागति—पंचेन्द्रिय पशु और मनुष्य देव होता है। देव से मरकर भू, जल, वनस्पति, नर पशु हो सकता है। दूसरे स्वर्ग के ऊपर देव स्थावर नहीं होते। बारहवें स्वर्ग (सहस्रार) के ऊपर वाले देव मरकर मनुष्य होता है।

भोगभूमि के नर और पशु दूसरे स्वर्ग तक ही जाते हैं। देव भोगभूमि में नहीं जाते हैं। कर्मभूमि के पशु, मनुष्य, भोग-भूमि में जाते हैं। कर्मभूमि के तिर्यंच श्रावकव्रत धारण कर सकता है। ये सहस्रार के ऊपर नहीं जाते। अव्रत सम्यग्दृष्टि मनुष्य बारहवें स्वर्ग के ऊपर नहीं जाते।

अन्यमति, पंचाग्नी तपने वाले भवनत्रय में जाते हैं। परिव्राजक दण्डी पांचवें स्वर्ग तक जाते हैं।

अन्यमति परमहंस सहस्रार के ऊपर नहीं जाते। मोक्ष का मार्ग जैन धर्म के बिना नहीं बनता।

अनुव्रतधारी श्रावक-श्राविका सोलहवें स्वर्ग तक जाते हैं। द्रव्यलिंगी मुनि नवग्रीवक तक जाते हैं।

भावलिंगी मुनि पंचपंचोत्तर तक जाते हैं।

इन्द्र-इन्द्राणि, लोकपाल, लोकान्तिक देव अनुत्तर विमानवासी—ये सब एक भवावतारी होते हैं।

मनुष्यगति—मनुष्यपर्याय में मुनि अवस्था से ही मुक्ति होती है। वायुकाय, तेजकाय में से मनुष्य नहीं होता।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तीर्थंकर की आगति देव और नरक दो गति है। चक्रीय, अर्द्धचक्रीय, हलधर स्वर्ग से आते हैं। मति—चक्रवर्ती की गति स्वर्ग-नरक मोक्ष है।

वलभद स्वर्ग या मोक्ष जाते हैं। अर्द्धचक्री नरक ही जाता है। 63 शलाका के पुरुष मोक्ष के पात्र हैं। कुलकर देवलोक में जाते हैं। कामदेव हरि ऊर्ध्वलोक में जाते हैं। नारद, रुद्र नरक में जाते हैं और जन्मान्तर से मोक्ष जाते हैं। तीर्थंकर के माता-पिता स्वर्ग-लोक को जाते हैं।

तिर्यंचगति—तिर्यंच पंचेन्द्रिय मरण कर चौबीसों दण्डक में जाता है। वहां से मरकर पशु होता है। विकलत्रय की दस गति आगति होते हैं। पांच स्थावर, तीन तिकलत्रय, मनुष्य तिर्यंच इन्हीं दसों में उत्पन्न होते हैं।

नारकीय दण्ड के बिना पृथ्वी, पानी, वनस्पति, वायु, तेज, मरकर नव में जाते हैं। मनुष्य नहीं होते।

पंच स्थावर, विकलत्रय और पशु इनकी नौ गति होती हैं। इस प्रकार चौबीस दण्डक कहे हैं। इनको त्याग कर परमपद जो मोक्ष उसको प्राप्त करे।

व्रत—बुरे कामों का त्याग और अच्छे काम करना व्रत है। इनमें बारह प्रकार हैं—5 अनुव्रत (1) अहिंसानुव्रत, (2) सत्यानुव्रत' (3) अचौर्यानुव्रत, (4) ब्रह्मचर्यानुव्रत, (5) परिग्रह-प्रमाणव्रत, 2 गुणव्रत 3—(1) दिग्यव्रत, (2) देशव्रत, (3) अनर्थ दण्ड।

चार शिक्षाव्रत —(1) सामायिक, (2) पोषधोपवास, (3) भोगोपभोग परिमाण, (4) अतिथि संविभाग।

इसी प्रकार बारह व्रत हैं। विशेष ज्ञान के लिए रत्नकाण्ड श्राविका चार में से जान लेना चाहिए।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सच्चा श्रावक कौन है ?

श्रावक किसे कहते हैं ?

श्रावक शब्द चार अक्षरों से बनता है।

स-रा-व-क—श्री गुरु आचार्य इनको इस तरह से बतलाते हैं।

1. स्—सम्यक्ती, सन्तोषी, समभाव, श्रद्धानी, स्वाध्यायी, शीलवान, सरल स्वभावी।
2. रा—रागी धर्म का—रागदेव से गुरु से, शास्त्र से, राग दया से।
3. व—विचारवान, विवेकवान, विहार-आहार, आचरण शुद्ध, विजयवान।
4. क—कषायों से रहित, क्षमावान, कृतज्ञ, (न्याय का पक्ष, न्याय से धन उपार्जन करने वाला) इस तरह के जिसमें ये गुण पाये जाते हों, वही सच्चा श्रावक है। और इन्हीं गुणों को लेकर इसका नाम श्रावक है। कौम रत्न कोई चीज नहीं है। चाहे भले हीजैनी कुल में पैदा हुए हैं। लेकिन उनमें ये आचरण नहीं हों तो बेकार है। मृगसैन, धीवर, यमपाल चांडाल वगैरा ने भी रत्न धर्म को पालकर स्वर्गों के सुखों की प्राप्ति की। कौम रत्न कोई चीज नहीं है। जिसमें ये रत्न हैं, वही सच्चा श्रावक कहलाने का हकदार है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

आलोचना पाठ

मंगलाचरण

दोहा

जिन वाणी गुन की भरी, सदा करो कल्याण।
सब ही को प्रणाम हो, श्री चौबीसों भगवान।।

गुरु निर्ग्रन्थ दया धर्म, प्रणमहु अरहंत देव।
अवर सकल मिथ्या, मनी भव दधि तरुण एव।।

वन्दो पांचों परम गुरु, चौबीसों जिनराज।
करूं शुद्ध आलोचना शुद्धि करन के काज।।

अर्थ—प्रथम मैं चौबीसों महाराजों को नमस्कार करता हूं फिर अपनी आत्मा को शुद्ध करने के लिए मैं अपने पापों का प्रतिक्रमण करता हूं।

सखी छन्द (चौदह मात्रा)

सुनिए जिन अर्ज हमारी, हम दोष किए अति भारी।
तिनकी अब निवृति काजा, तुम शरण लही जिनराजा।।

अर्थ—हे भगवान मैं आपके सामने भक्ति से स्तुति करता हूं भगवन् हमने जो दोष किए हैं उन्हीं के निवारण के लिए हम आपकी शरण में आए हैं।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

इक-वे-तै-चऊ इन्द्रीवा, मन रहित सहित जे जीवा।
तिनकी नहीं करुणा धारी, निरदई है घात विचारी ।।

अर्थ—हे भगवान, एकेन्द्रिय, द्विन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुर्न्द्रिय मन रहित जे जीव हैं, मैंने उन पर करुग भाव नहीं किए। एक एयन्द्रिय जीवों पर कभी दया भाव नहीं किए जैसे जल व मर्यादा बरता (बे तोल बरता) अग्नि के जीवों पर कभी ध्यान ही नहीं दिया। और हरितकाय के जीवों को ऐसा खाया जैसे पशु खाते हैं। द्वीन्द्रिय लट व नाली का कीड़ा आदि पर दया भाव नहीं किए। जैसे अग्नि का पानी नाली में डाला तथा नाली के मुंह पर नहाया और पेशाब किया, चावल को शोधकर सुरसुली लट वगैरा को वैसे ही जमीन पर फंक दिया। त्रीन्द्री-चींटी आदि पर दया भाव नहीं किए जैसे मिठाई, घी, तेल आदि को ढंककर नहीं रखा और चलते समय जमीन को शोधकर नहीं चला और प्रमाद के वश होकर वस्तु को फेंका-घसीटा। चौइन्द्री-मक्खी, मच्छर, बिच्छू, ततैये आदि को बहुत सताया जैसे, ततैये के छत्ते जलाए, मधुमक्खी के छत्ते को तोड़ा और अपने जीभ के लिए तुड़वाया और बिच्छू आदि को जहां देखा वहीं मारा और दूसरों से मारने को कहा। हे भगवान ! इस तरह से हम जीवों को घात करते आ रहे हैं और करवा रहे हैं और कर रहे हैं।

समरम्भ समारम्भ आरम्भ, मन, वच, तन कोने प्रारम्भ।
कृत कारित मोदन करके, क्रोधादि चतुष्टय धरके ।।

अर्थ—हे भगवान मैंने समरम्भ (विचार) समारम्भ (वस्तु का इकट्ठा करना) आरम्भ (काम को चालू करना) मन से, वचन से, काय से करे या करवाए और करने की अनुमोदना की। क्रोध, मान, माया, लोभ आदि 108 पाप किए इसलिए मैं आपकी

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

माला जपता हूं। मैंने माला 108 दाने की इस तरह बनाई है। 8 गुण सिद्धि के, 12 गुण अरहन्त के, 36 आचार्य के, 25 उपाध्याय के, 27 साधु के इस तरह 108 गुण पंचपरमेष्ठी के जोड़कर माला बनाता हूं।

गत आठ जुगममेदन तैं, अघ कीने पर हेढन तैं।
तिनकी कहूं कोली कहानी, तुम जानत केवल ज्ञानी ।।

अर्थ—हे भगवान ! क्रोधादि जो 108 कषाय हैं। अगर मैं इन कषायों का वर्णन एक करोड़ जिह्वा से करूं तो भी नहीं कर सकता और आप तो केवलज्ञानी हैं, आप के तो ज्ञान हमेशा झलकता ही है।

विपरीत एकान्त विनय कैं, संशय अज्ञान कुनय कैं।
वस होय घोर अघ कीने, वच तैं नहीं जाता कहीने ।।

अर्थ—हे भगवान ! मैंने इस पांच मिथ्यात्व का सेवन किया 1. विपरीत, 2. एकान्त, 3. संशय, 4. अज्ञान, 5. कुनय।

1. विपरीत—हे भगवान ! मैं सच्चे धर्म से उल्टा चला हिंसा में धर्म मान।

2. एकान्त—एक नाम का पक्ष लेते हुए हठागृही बना अपनी गलत बात का भी पक्ष किया।

3. संशय—जिनेन्द्र देव की वाणी में संशय की और सच्चे शास्त्र पर श्रद्धान नहीं किया और सच्चे गुरु की निन्दा की।

4. अज्ञान—हे भगवान ! मैं अज्ञान के बस होते हुए मैं मोह रूपी अन्धकार में पड़कर धर्म-भ्रष्ट हुआ।

5. कुन्य—हे भगवान ! मैंने सच्चे देव गुरु शास्त्र से प्रीति तोड़ी और कुदेव, कुशास्त्र से जिसमें हिंसा का पोषण है, मैंने उनसे प्रेम

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

किया। इन पांच मिथ्यात के बस होकर मैंने बड़े-बड़े पाप किए, जो कहे भी नहीं जा सकते।

कुगुरु की सेवा कीनी, केवल अदमा करि भीनी।
या विधि मिथ्यात बढ़ायो, चहुं गति नांध दोष उपायो।।

अर्थ—हे भगवान ! मैंने कुगुरु की सेवा की, तृष्णा के बस होकर पांचों पापों का सेवन किया, पांच मिथ्यात्व का भी सेवन किया, इनसे पाप का वध करके चारों गति में भ्रमा।

हिंसा पुनि झूठ जु चोरी पर बनिता सो दृग जोरी।
आरम्भ परिग्रह मीने, पन पाप जुमा विधि कीने।।

अर्थ—हे भगवान ! मैंने हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह आदि पांच पापों का सेवन किया। 1. हिंसा—बिना प्रयोजन चलते-चलते फूल, पत्ते वगैरा तोड़े और जानवरों को सताया जैसे बिल्ली, कुत्ते के बच्चों को लड़ाया मुर्गी को भी लड़ाया पानी में ढेला फेंका, खेतों को फुकवाया, 2. झूठ-झूठ के दो भेद हैं। क असत्य ख. दूसरे की आतमा को दुखाना।

1. असत्य—आंखों देखी, कानों सुनी को बिन्दु का सिन्धु कर देना।

2. दूसरे की आतमा को दुखाना—किसी पर झूठा दोष लगाकर उसकी दिल्लगी, लेकर उसकी आत्मा को दुखाना या किसी की निन्दा करना या चुगली करना सौ झूठ है।

3. चोरी—किसी की न दी हुई व पड़ी हुई चीज को उठा लेना चोरी है, जैसे धन चुराना, कम-बढ़ती तोलना व कम नापना व बढ़िया चीज में घटिया चीज मिलाना व ठगना व ठगवाना सौ चोरी है।

4. कुशील—अपनी स्त्री में सन्तोष न रखते हुए परस्त्री से

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

प्रीति जोड़ना, अपने प्रीति तोड़कर पर-पुरुष से प्रीति जोड़ना व परस्त्री की तरफ व पर-पुरुष की तरफ बुरी दृष्टि से देखना हे भगवान ! इस तरह से मैंने कुशील का सेवन किया।

5. परिग्रह—हे भगवान ! मैं आरम्भ से बड़े-बड़े अत्याचार कर धन इकट्ठा किया, जैसे—काला बाजार (ब्लैक मार्केट) और हिंसक आरम्भ—जैसे वनकटी, भट्ठा लगाना आदि किए और कराए और करते की बड़ाई की।

भावार्थ—अब यहां कुशील के ऊपर कुछ उपदेश देते हैं, हे भगवान ! अब आपकी शरण में आकर कुशील को त्यागकर शीलव्रत का नियम लेता हूं वैसे तो आगम में (शास्त्र में) 18,000 भेद गति बताये हैं तथा यहां पर गृहस्थ के लिए अनुव्रत रखा है, 'स्वगारा सन्तोष' अपने पति व पत्नी में सन्तोष रखना बल्कि महान पुरुष इनमें भी रहते हैं संसार भर की स्त्री को माता बहन व पुत्री संसार भर के परपुरुष को भाई, पिता व पुत्र समझते हैं।

सपरस रसना घ्रानन को, चक्षु कान विषय सेवन को।
बहु काम किये मन माने, कहु न्याय-अन्याय न जाने॥

अर्थ—हे भगवान ! मैंने स्पर्शन, रसना, घ्रान, चक्षु, कर्ण पांचों इन्द्रियों का भी सेवन किया।

1 स्पर्शन—इस शरीर के लिए बड़े-बड़े आरम्भ किए, जैसे—रेशमी व ऊनी कपड़ा पहना, तेल-फुलेल से सजाया और धर्म कार्य में कायर रहा।

2. रसना—हे भगवान ! इस जीभ के कारण भक्ष्य-अभक्ष्य सब खाए, जैसे—शहद, बाजार की चाट, जलेबी, मिठाई वगैरा खायी।

3. घ्रानन—हे भगवान ! मैंने नाक के लिए सुगन्ध फूल

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

बगैरा तुड़ताये और उन्हें सूंघा फूल के अन्दर के कीटाणु सांस के द्वारा मर गया।

4. चक्षु—आंखों के विषय के लिए सिनेमा देखा, परस्त्री को ताका, पर-पुरुष को ताका दूसरे के धन को बुरी निगाह से देखा।

5. कर्ण—कानों से दूसरे की बुराई सुनकर खुश हुआ और कुशास्त्र सुने सच्चे शास्त्र सुने तो अमल नहीं किया। हे भगवान ! मैंने इस तरह से पाप व अन्याय न समझते हुए पांचों इन्द्रियों का सेवन किया।

फल पंच उदुम्बर खाए, मधु मध्य मांस चित चाहे।
नहीं अष्ट मूल गुण धारे, सेये कुविसन दुख कारे॥

अर्थ—हे भगवान ! मैंने पंच उदुम्बर खाए जिसमें आंखों देखे त्रस जीव चलते-फिरते हैं। वे फल भी खाए जैसे पीपल, बड़, गूलर, पाकर और अंजीर आदि खाए और मधु, मद्य, मांस का सेवन किया इस तरह से हमने अष्ट मूल गुण का धारण नहीं किया और सप्त विषय का भी सेवन किया जैसे—जुआ खेलना, वेश्यागमन, मदिरा, शिकार खेलना, परस्त्री गमन, मांस खाना, चोरी करना इन सप्त विषयों का भी सेवन किया।

श्लोक

हुई बीस अभख जिन गाए, सो भी निस दिन भुंजाए।
कुछ भेदा भेदन पायो ज्यों-त्यों, करी उदर भरायो॥

अर्थ—हे भगवान !बाईस अभक्ष्य रात-दिन खाए, जैसे—आठ मूल गुण 1. ओला, 2. वेदल, 3. बहुबीजा, 4. वैंगन, 5. अचार, 6. कन्द-मूल, 7. मिट्टी, 8. विष, 9. तुच्छ फल, 10. गुसार, 11. चलत रस, 12. माखन, 13. जलेबी, 14. मुरब्बा आदि खाए

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

और सिरका, मुरब्बा, खमीरा, चटनी, अचार आदि इनका भी विचार नहीं किया। बस, रात-दिन पेट भरने की लगन रही।

अनन्तानुबन्धी सो जानो, प्रत्यखान अप्रत्याख्यानो।
संज्वलन चोकड़ो गुनिये, सब भेद जु षोडस सुनिये ।।

अर्थ—हे भगवान ! मैंने मन से, वचन से, काय से क्रोध, मान, माया, लोभ चारों कषायों को करी कराई, करने की अनुमोदना की है। हे भगवान ! इस तरह से मैंने 108 पाप किये, सो मैं आपकी शरण में आकर इनकी निवृत्ति करता हूं।

श्लोक

परिहास अरति रति सोग, मय ग्लानि तिवेद संजोग।
पन बीस जु भेद भए इम, इनके बस पाप किए हम।।

अर्थ—हे भगवान ! मैंने दूसरे की हंसी उड़ाई, दूसरे के दुःख में सुख माना और दूसरे के सुख में दुख माना और अपनी जरा-सी चित्त में शोक कर बैठा दूसरे जीवों को तरह-तरह की बातें कहकर भय उपजाया गरीबों व अपाहिजों को देखकर ग्लानि की स्त्री से पुरुष से, नपुंसक से रमन करने के भाव रखे, नौ और सोलह पच्चीस कषाय द्वारा पापों का उपार्जन किया।

श्लोक

निद्रा वस शयन कराई सुपने मधि दोष लगाई।
फिर जागी विषय वन धायो, नाना विधि विष फल खायो ।।

अर्थ—हे भगवान ! मैंने सपने में भी दोष का उपार्जन किया। जैसे विस्तर को बिना झाड़े विछाया—दिन में किसी से लड़कर

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

रात को स्वप्न में कषाय उत्पन्न की और किसी स्त्री को दिन में देखा या पर-पुरुष को दिन में देखा और मन चला तो स्वप्न में वैसा ही दिखाई पड़ा जिससे पापों का बंध हुआ और फिर जब आंख खुली तो काम-वासना की तरफ मन चला। हे भगवान! इस तरह हमने रात्रि के पाप का बंध किया।

श्लोक

आहार निहार विहार, इनमें नहीं जतन विचार।
बिन देखे धरा उठाया, बिन शोधे भोजन खाया।।

अर्थ—हे भगवान ! मैंने भोजन के अन्दर भक्ष्य-अभक्ष्य का विचार नहीं किया। और जब टट्टी गया तो कीड़े-मकोड़े सड़े हुए पाखाने का कोई विचार नहीं किया और उसी पर टट्टी की तथा चलते समय जमीन शोधकर नहीं चला और वस्तु बिना देखे उठाई, बिना देखे धरी, फेंकी घसीटी व खड़ाऊं—कील के जूते पहनकर विहार व आहार किया।

श्लोक

तब ही प्रमाद सतायो, बहु विधि विकल्प उपजायो।
कछु सुधि-बुद्धि नाहीं रही है, मिथ्या मतिहार गई है।।

अर्थ—हे भगवान ! मैंने अन्याय से धन कमाया, उसका भोजन खाया जिससे मन में संकल्प पैदा हुआ जिससे मिथ्यात्व रूपी अंधेरा छाया। जैसे अंधेरे में सफेद वस्तु भी काली दीखती है, ठीक इसी तरह से मेरी बुद्धि पापों की तरफ चली है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्लोक

मर्यादा तुम ढिग लीनी, ताही हु में दोष जु कीनी।
भिन्न-भिन्न अब कैसे कहिए, तुम ज्ञान विषय सब पाइये॥

अर्थ—हे भगवान ! हमने जो तुम्हारे सामने नियम लिये फिर उन्हें भंग किए विषय कषाय के बस होकर हे भगवान ! हम उनका अलग-अलग वर्णन नहीं कर सकते आपके ज्ञान में तो हमेशा ही झलकते रहते हैं।

श्लोक

हा-हा मैं दुष्ट अपराधी त्रस जीवन को जु विराधी।
थावर को जतन न कीनी उर में करुणा नहीं लीनी।

अर्थ—हे भगवान ! मैंने त्रस जीवों की रात-दिन हिंसा की। पृथ्वी, काय, जल काय, अग्नि काय, वायु काय, वनस्पति काम की भी रक्षा नहीं की। हे भगवान ! मैं दुष्ट हूं, अपराधी हूं, अधर्म हूं, पापी हूं जो इन पर दया भाव नहीं किए।

श्लोक

पृथ्वी बहु खोद कराई, महलादिक जंजा चिनाई।
बिन गोल्यो पुनि जल ठोल्यो, पंखा तै पवन विलोल्यो॥
हा-हा, मैं अधमा चारी, बहु हरित काम जु विदारी।
ता मधि जीवन के खन्दा, हम खाए धरि आनन्दा॥

अर्थ—हे भगवान ! मैंने जरूरत से ज्यादा जमीन खुदवाई और नहरें व सड़कें, पत्थर की खानें खुदवाईं। ऊंचे-ऊंचे मकानात जरूरत से ज्यादा चिनवाए, बिना छना पानी पिया व नहाने के

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

काम में भी लाए और पंखे से हवा की जिससे मक्खी-मच्छर मरे। हे भगवान ! मैंने जमीकन्द साधारण व प्रत्येक वनस्पति खाई

1. जमींकन्द—आलू, गाजर, मूली वगैरा खाए।

2. साधारण—रोयेंदार (अलवाये) फल खाए। इस तरह से पाप का भागी बना।

श्लोक

हा-हा ! प्रमाद बसाई, बिन देखे अग्नि जलाई।
ता मथी जीव जु आये, ते हूं पर लोक सिधाये॥

अर्थ—हे भगवान ! मैंने आलस्य के वस होते हुए बिना देखे बिना झाड़े लकड़ी व गोसा व बिझी लकड़ी जलाई है हे भगवान ! इससे इतने पाप का बन्ध हुआ जिसका कहना कठिन है।

श्लोक

बिंध्यो अनराति पिसायो, ईंधन बिन शोधि जलायो।
झाड़ू ले जांगा बुहारी चिटी आदिक जीव विदारी॥

अर्थ—हे भगवान ! मैंने बीझा हुआ अन्न उसमें सुरसुली बगैरा चल रही थी, पिसाया और बेचा और ईंधन को बगैर झाड़े पोंछे जलाया और झाड़ू देते समय चीटीं आदि का ध्यान नहीं किया हलते-चलते जीवों का ध्यान नहीं किया।

श्लोक

जल छानी जीवानी कीनी, सोहु पुनि डार जु दानी।
नहीं जल थानक पहुंचायो, क्रिया बिन पाप उपायो॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अर्थ—हे भगवान ! मैंने जल को छानकर जीवानी को कुएं में नहीं पहुंचाया । हे भगवान ! मैंने उसको वहीं पर डाल दिया । मैंने दया व विचार से क्रिया न की, इसलिए पाप का भागी बना ।

श्लोक

जल मल मोरन गिरवायो, कृषि कुल बहु धात करायो ।
नदियन बिच चीर धुवायो, कोसन के जीव भरायो ।।

अर्थ—हे भगवान ! मैंने मोरी में (नाली में) पेशाब किया । और गरम-गरम पानी डाला और आटे, साग, दाल आदि का पानी डाला व नाली के ऊपर बैठकर नहाया और बर्तन व चौके का पानी भी नाली में बहाया जिससे अनन्तानन्त जीवों की हत्या हुई व उत्पत्ति हुई, पाप की ये नाली बरसात के पानी के लिए होती है । लेकिन मैंने इनमें ऊपर लिखे कार्य किए जिसमें महान पाप का बंध हुआ । हे भगवान ! मैंने नदी, तालाब व जोहड़ में कपड़े धुलवाए और जहां तक वह धोवन का पानी गया वहां तक के जीवों का घात हुआ जैसे—मनुष्य के पेशाब से मोरी के जीवों का घात होता है, इसी तरह से जोहड़ व तालाब व नदी के जीवों का घात होता है । हे भगवान ! मैंने इस तरह से महान पाप का बंध किया ।

भावार्थ—हमें इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि चौक की नाली आगे होती है और छत की मकान के पीछे होती है इसी तरह शरीर रूपी मकान की भी दो नाली होती हैं । पीछे के पतनाले में टट्टी जाती है और आगे के में पेशाब जाता है और हम इसके विपरीत बरताव करें अर्थात् पेशाब की जगह खून आवे तो बड़ी पीड़ा होती हैं और हम इसका इलाज कराते हैं । इसलिए चौक की नाली रात-दिन पानी बहाने के लिए नहीं है बल्कि वह

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

बरसात के लिए है। नाली हर समय पानी से तराहती है। जिससे हर समय जीवों की उत्पत्ति रहती है और वह किसी भी समय सूखने भी नहीं पाती आप ध्यान दें कि सरकारी राजवाहे व नहर भी 15 दिन चलते हैं, 15 दिन बन्द रहते हैं और शहर के नल भी 24 घण्टे में 6 घण्टे चलते हैं। और 18 घण्टे बंद रहते हैं आप अपने पम्प-नाली कितने घण्टे के लिए बन्द करते हैं। यह नीति का वचन है कि जो नीति और शास्त्र के विरुद्ध चलता है वह महान पापी होता है। आप ख्याल करें—अपनी नीति पर चल रहे हैं या अनीति पर। जीव दया के बिना कितना ही दान दिया जाए या पूजा की जाए सब व्यर्थ है, जैसे—एकड़े (1) के बिना शून्य (०) व्यर्थ है वैसे ही बिना दया के पूजा या दान व्यर्थ है और आजकल मामूली से मामूली गृहस्थ का खर्च 200 रु० माहवर है तेल, साबुन, सुर्खी क्रीम, पाउडर वगैरा का 10 या 15 रु० का खर्च है और जीव दया के लिए कुछ भी नहीं लेकिन आपको अपनी आय पर 1 रु० सैकड़ा जीव दया का जरूर-जरूर निकालना चाहिए और उसका रेत मंगवाकर घर में दो जगह फैलवा देना चाहिए और एक जगह के रेत पर एक का पानी डालो आपके ये 1 रु० सैकड़ा एक लाख रु० के दान के बराबर है पूजा की सामग्री बनाते समय सामग्री के धोवन का पानी एक बर्तन में इकट्ठा करके उसको किसी खुली छत पर फेंक देना चाहिए जिससे वह जल्दी सूख जाए और जीवों की उत्पत्ति न होवे इस क्रिया से आपको 1 साल का पूजन करने का फल प्राप्त होगा।

श्लोक

अन्नादिक शोध कराई, तामें जु जीव निसराई।
तिनका नहीं जतन कराया, गरिमालै धुप डराया।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अर्थ—हे भगवान ! मैंने अन्न या गुड़ वगैरा के जीव शोधकर धूप में या गलियारे में, रास्ते में डलवाये जिससे वे पैरों के नीचे आकर मृत्यु को प्राप्त हुए और मैंने उन पर दया भाव नहीं किया।

श्लोक

पुनि द्रव्य कमावन काजे, बहु आरम्भ हिंसा साजे।
किए तृष्णा बस भारी, करुणा नहीं रंच बिचारी।।

अर्थ—हे भगवान ! मैंने धन कमाने के लिए बड़े-बड़े अन्याय किए, जैसे—कुट्टी मैदा व आटे का इंजन आदि लगवाये व लगाये हैं, भगवान ये सब पाप हमने तृष्णा के बस होकर किया और दिल में कभी दया भाव नहीं लाए।

श्लोक

इत्यादिक पाप अनन्ता, हम कीने श्री भगवन्ता।
संतत चिरकाल उपाई, वानी ते कहिए न जाई।।

अर्थ—हे भगवान ! इस तरह से अनादि काल से मैंने ऐसे अनतानन्त पाप किए और कर रहे हैं, जिसका वर्णन हम वाणी (जिह्व) से नहीं कर सकते हैं।

श्लोक

ताको जु उदय अब आयो, नाना विधि मोहिं सतायो।
फल भुंजत जीय दुख पावे, वच तैं कैसे करि गावैं।।

अर्थ—भगवान ! इसमें पाप उदय में आ रहे हैं, और मुझको

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अनेक प्रकार से सता रहे हैं, मैं इन पापों को भोगता हुआ दुख उठा रहा हूं, जिसका मैं वर्णन नहीं कर सकता।

श्लोक

तुम जानत केवल ज्ञानी, दुख दूर करो शिव थानी।
हम तो तुम शरण लीह है, जिन तरण विरद सही है ।।

श्लोक

इक गांव पति जो होवे, सो भी दुखया दुख खोवे।
तुम तीन भुवन के स्वामी, दुख मेटहु अन्तर्यामी ।।

श्लोक

द्रोपदी को चीर बढ़ायो, सीता प्रति कमल रचायो।
अंजन से किए अकामी, दुख मेटहु अन्तर्यामी ।।

अर्थ—हे भगवान ! जो भी तुम्हारी शरण में आया, आपने उसी का दुख दूर किया। जैसे—द्रौपदी के शील की रक्षा चीर बढ़ाकर दी। सीता की अग्नि-परीक्षा में कमल व सरोवर रचाकर रक्षा की और अंजन जैसे चीर को आपने पार उतार दिया तो अब हमारी बारी है, हे प्रभो ! हमारे दुख मेटो।

श्लोक

मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपने विरद निहारो।
सब दोष रहित कर स्वामी, दुख मेटहु अन्तर्यामी ।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

श्लोक

इन्द्रादिक पदवी न चाहूं, विषपन में नाही लुभाऊं ।
रामादिक दोष हरिजे, परमातम निज पद दिए ।।

अर्थ—हे भगवान ! मेरे अवगुन ध्यान में न रखते हुए और अपना सेवक समझते हुए मेरे सब दोष पाप रूपी कामों को मेटो। आप तो तीन भुवन के स्वामी हैं। हे भगवान ! मैं संसार की किसी भी वस्तु की इच्छा नहीं रखता बल्कि इन्द्र पदवी से भी राग नहीं। मैं तो सिर्फ आप जैसा होना चाहता हूं. ये शक्ति आप में है कि आप अपने जैसा कर देने के लिए सामर्थ्य हो।

श्लोक

दोष रहित जिन देव जी, निज पद दीजे मोय ।
सब जीवन के सुख बढ़े, आनन्द मंगल होय ।।
अनुभव मानिक पारखी, 'जैहरी' आह जिनेन्द ।
ये ही वर मोही दीजिए, चरण शरण आनन्द ।।

अर्थ—हे भगवान ! कर्म रोग से रहित करके आप मुझे अपने जैसा बना लो और हे भगवान ! मैं यह चाहता हूं कि सब जीवों को भी यही पदवी मिले जैसे आपको मिली है, और जौहरी की उपमा क्या दी जाए वह तो सामान्य मनुष्य है वह तो हीरे-मोती पन्ने व लाल आदि की परख करता है। बल्कि वह तो अचेतन वस्तु ही परखता है। और आपके ज्ञान में चेतन-अचेतन सर्व व्याप्त है, आप तो अनुपम हो। आपको किसी भी वस्तु की उपमा नहीं दी जा सकती। अतः आपसे बारम्बार यही प्रार्थना है कि मेरे दुखों को व कर्मों को दूर करके अपने जैसे पद को देने की कृपा करें।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सामायिक पाठ

हे देव ! मेरी आत्मा सदैव सब जीव मात्र पर मैत्री भाव रखे, गुणी जनों को देखकर हर्षित होवे। दुःखी जीवों पर करुणा भाव से भर जावै तथा विपरीत आचरण करने वालों के प्रति मध्यस्थ रहे ॥1॥

हे जिनेन्द्र ! जैसे म्यान से तलवार अलग हो जाती है, उसी प्रकार अनन्त शक्तिशाली निर्दोष आत्मा को शरीर से अलग करने के लिए आपके प्रसाद से मुझे शक्ति प्राप्त हो ॥2॥

हे नाथ ! मेरे मन से ममत्व भाव हटकर दुख में, सुख में, शत्रु में, मित्रों में, संयोग में, वियोग में, महल में या वन में सदा समता भाव रहे ॥3॥

हे मुनीश ! अन्धकार के विनाशक दीपक के तुल्य आपके दोनों चरण मेरे हृदय में ऐसे स्थित रहें मानो जाम हो गये हों, कील दिए गये हों, उकेर दिए हों अथवा प्रतिबिम्बित कर दिए हों ॥4॥

हे देव ! यदि असावधानी से इधर-उधर चलते हुए मैंने एकेन्द्रिय आदि प्राणियों को मारा हो, छेदा हो, मिलाया हो, पीड़ा दी हो तो मेरा यह दुष्कर्म क्षमा हो ॥5॥

मोक्ष मार्ग के विपरीत आचरण करने वाले मुझ दुर्बुद्धि ने कषाय और इन्द्रियों के वशीभूत होकर अगर चरित्र की विशुद्धि को नष्ट किया हो तो हे प्रभु ! मेरा यह दुष्कर्म मिथ्या हो ॥6॥

जैसे वैद्य मन्त्र के द्वारा सम्पूर्ण विष को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार मैं अपनी निन्दा, आलोचना और ग्रहों के द्वारा मन, वचन, काय, और कषाय के वश किए गये पापों को जो कि

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सांसारिक दुःख के कारण है, नष्ट करता हूं ।।7।।

हे जिनेन्द्र ! मैंने सम्यक् चरित्र में प्रमाद और अज्ञानवश जो अतिक्रमण, व्यतिक्रम, अतिचार और अनाचार किए हैं, उनकी शुद्धि के अर्थ में प्रतिक्रमण करता हूं ।।8।।

मानसिक रूप से व्रत को शुद्धि में हानि होना अतिक्रम है । शील व्रतों का उल्लंघन होना व्यतिक्रम है, विषयों में प्रवर्तित होना अतिचार है और विषयों में अति आसक्त हो जाना अनाचार है ।9।।

यदि मैंने प्रमाद से अर्थ-मात्रा, पद्य वाक्य से रहित उच्चारण किया हो तो सरस्वती देवी मुझे क्षमा प्रदान करके केवल ज्ञान रूपी लब्धि प्रदान करें ।।10।।

हे जिन वाणी मां ! तू चिन्तित वस्तु देने में चितामणि के तुल्य है, तेरी वन्दना करते हुए मुझे बोधि समाधि परिणामों की विशुद्ध, निजात्मा की प्राप्ति तथा मोक्ष सुख की सिद्धि होवे ।।11।।

जो सब मुनि समूह के द्वारा किए तथा सब मनुष्य और देवों के द्वारा स्तुति किए जाते हैं, तथा वेद और पुराण जिसका गुणगान करते हैं ऐसे वे देवों के देव मेरे हृदय में निवास करें ।।12।।

जो अनन्त दर्शन-ज्ञान और सुख स्वरूप हैं, संसार के सम्पूर्ण विकारों से रहित हैं, जिसे समाधि के द्वारा प्राप्त किया जाता है, परमात्मा शब्द से जिसे पुकारते हैं, वह देवों के देव मेरे हृदय में वास करें ।।13।।

जो सांसारिक कष्टों को नष्ट करता है, जगत के रहस्य को जानने वाले जिसे योगीजन अन्तरंग में निरीक्षण करते हैं, वह देवों के देव मेरे हृदय में वास करें ।।।14।।

जो मोक्ष मार्ग का कथन करता है, जन्म-मरण के दुख से

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

रहित हैं, तीनों लोकों को जानते हैं, शरीर तथा कर्म कलंक से रहित हैं वह देवों के देव मेरे हृदय में निवास करें ॥15॥

जिन रागादि देवों ने समस्त संसारी जीवों को वश में किया है, वे दोष जिसमें नहीं हैं जो अतीन्द्रिय ज्ञान स्वरूप हैं, तथा जो अविनाशी हैं, वह देवों के देव मेरे हृदय में निवास करें ॥16॥

जो विश्व की सम्पूर्ण वृत्ति को जानने वाले हैं, जो सिद्ध हैं बुद्ध हैं, और कर्मवन्ध से रहित हैं। जिसका ध्यान करने से समस्त विकार नष्ट हो जाते हैं, वह देवों के देव मेरे हृदय में वास करें ॥17॥

जो कर्म व रागादि दोषों से अछूता है, जो अन्धकार के लिए सूर्य-किरण के समान है, जो निर्मल है, नित्य है, एक है तथा अनेक रूप भी है, उस आप्त देव की मैं शरण प्राप्त करता हूं ॥18॥

जहां सूर्य का प्रकाश नहीं पहुंचता वहां भी जो अपने ज्ञान-रूपी सूर्य से प्रकाश करता है, जो स्वात्मा में स्थित है और ज्ञानमयी प्रकाश स्वरूप है उस आप्त देव की मैं शरण जाता हूं ॥19॥

जिसमें देख लेने पर यह विश्व अपनी पर्यायों के साथ स्पष्ट तथा पृथक दिखता है जो शुद्ध हैं, कल्याणस्वरूप हैं, शान्त हैं, अनादि हैं, तथा अन्तरहित हैं, उस आप्त देव की मैं शरण को प्राप्त होता हूं ॥20॥

जिस तरह वन में अग्नि-वृक्षों के समूह को क्षण-भर में जला कर नष्ट कर देती है, उसी प्रकार जो काम मान, ममत्व, खेद, निन्दा, भय, शोक और चिन्ता को नष्ट कर देता है, मैं उस आप्त देव की शरण में जाता हूं ॥21॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

वस्त्र, पत्थर, घास-फूस, भूमि और लकड़ी से बनी चौकी आदि किसी की भी आवश्यकता समाधि के लिए नहीं है, केवल इन्द्रिय, कषाय और कषाय से रहित आत्मा को विशुद्ध जनों के योग्य माना है ॥22॥

हे भद्र ! समाधि के साधन संथारा, लोक-पूजा तथा संघ में मिल जाना आदि नहीं है। इसलिए सम्पूर्ण बाह्य वासनाओं को छोड़कर रात-दिन अध्यात्म में मग्न रहें ॥23॥

कोई भी बाह्य पदार्थ मेरे नहीं हैं, मैं कभी भी किसी का हूं, ऐसा निश्चय करके सम्पूर्ण बाह्य, पदार्थों को छोड़, हे भद्र ! तुम सावधान हो और मुक्ति के लिए प्रयत्न करो ॥24॥

हे भद्र ! आत्मा को आत्मा में देखता हुआ तू विशुद्ध ज्ञान दर्शनमय है। वास्तव में कहीं भी बैठा हुआ एकाग्र मन से साधु समाधि को प्राप्त करता हूं ॥25॥

शाश्वत, निर्मल तथा ज्ञान स्वभावी एक आत्मा ही मेरा है। समस्त बाह्य पदार्थ मुझसे भिन्न है तथा विनाशिक बल्कि अपने आपके उदय से प्राप्त हुए हैं, इसलिए पराश्रित हैं ॥26॥

जिसका शरीर भी अपना नहीं है, आत्मा के पुत्र, स्त्री व मित्र आदि के साथ एकत्व कैसे हो सकता है। सत्य ही है कि शरीर से चमड़ा अलग कर दिया जाने पर उसमें रोम-छिद्र कैसे रह सकते हैं ॥27॥

संसार रूपी वन में यह प्राणी बाह्य वस्तुओं के संयोग से अनेक दुख उठाता है। आत्म की मुक्ति के जिज्ञासुओं को नियोग से बाह्य वस्तुओं का सम्बन्ध छोड़ देना चाहिए। 28॥

संसार रूपी वन में भटकने वाले सर्व विकल्पों को छोड़कर सबसे भिन्न आत्म-तत्त्व का निरीक्षण करके तू परमात्म-तत्त्व में

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तल्लीन होना। पूर्व में स्वयं किए शुभाशुभ कर्मों का फल भोगना पड़ता है, यदि कोई अन्य दुख देता है तो स्वयं किए हुए कर्म व्यय हो जाते हैं ।।29-30।।

अपने किये हुए कर्म को छोड़कर किसी भी जीव को अन्य कोई कुछ नहीं देता । ऐसा विचारकर पर से मन को हटाओ। अन्य कोई कुछ देता है, इस बुद्धि को छोड़ दो ।।31।।

जो मनुष्य अमितमति आचार्य के द्वारा वन्दनीय सबसे भिन्न निर्दोष परमात्मा को सदा अपने मन में बसाते हैं। वे सर्व विभूतियों में श्रेष्ठ मुक्ति रूपी महल को प्राप्त करते हैं ।।32।।

जो मनुष्य एकाग्र मन से इन बत्तीस पदों द्वारा परमात्मा का दर्शन करता है। वह अविनाशी पद को प्राप्त करता है।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

卐 श्रावक पतिक्रमण 卐

जीवे प्रमादजनिताः प्रचुराः प्रदोषाः,
यस्मात्प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयान्ति।
तस्मात्तदर्थममलं गृहबोधनार्थम्,
वक्ष्ये विचित्रभवकर्मविशोधनार्थम् ॥1॥

अर्थ—जीव प्रमाद और अज्ञानता से अनन्त (दोष) पाप कर्म करते हैं। प्रतिक्रमण करने से उन दोषों की शान्ति हो जाती है इसलिए कृत कर्मों की शुद्धि के लिए यह प्रतिक्रमण का स्वरूप गृहस्थों के लिए प्रतिपादन किया जाता है।

भावार्थ—प्रतिक्रमण करने से मन की शुद्धि, किए हुए कर्मों की निर्जरा और दोषों से भय उत्पन्न होता है ॥1॥

पापिष्ठेन दुरात्मना जडधिया, मायाविना लोभिना,
रागद्वेषमलीमसेन मनसा, दुष्कर्म यन्निर्मितम्।
त्रैलोक्याधिपते, जिनेन्द्र भवतः श्रीपादमूलेऽधुना,
निंदापूर्वमहं जहामि सततं, वर्वर्तिषुः सत्पथे ॥2॥

अर्थ—हे त्रैलोक्य प्रभो ! हे जिनेन्द्र ! मैं बड़ा पापी, दुष्ट, अज्ञानी (जड़ बुद्धि) मायाचारी और लोभी हूं। मैंने अपने मन को रागद्वेष से मिलनकर अनन्त दुष्कर्म किए हैं। हे जिनराज ! अब मैं आपके चरण कमलों की शरण लेकर आपके समक्ष उपस्थित हुआ हूं। और सन्मार्ग में चलने के लिए बाध्य होता हूं, तथा भविष्य में भी मुझ से कुत्सित कर्म न हों, ऐसी मेरी इच्छा है ॥2॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

खम्मामि सव्व जीवाणं, सव्वे जीवं खमंतु मे।
मेत्ती मे सव्वभूदेसु, वैरं मज्झंण केणवि ।।3।।

अर्थ—मैं समस्त जीवों को क्षमा करता हूं और मुझे भी सब जीव क्षमा करो। मेरी समस्त जीव मात्र से मित्रता हो। मेरे साथ किसी का भी वैर नहीं है ।।3।।

भावार्थ—साम्यभाव धारण करने के लिए सबसे प्रथम यह आवश्यक है कि अपने मन की अत्यन्त विशुद्धि करे और वह इस प्रकार कि मन को विकृत करने वाले क्रोध, मान, माया, लोभ, ईर्ष्या आदि दुर्गुणों को हृदय से निकाल डाले, किसी ने भी अपना अनिष्ट किया हो तो भी उसके ऊपर क्षमा धारण करे। इतना ही नहीं किन्तु उसके साथ बंधुत्व भाव रहे। कदाचित् अपने से किसी का अनिष्ट हो तो भी उससे अपने अपराध की क्षमा चाहे और भविष्य में जीवमात्र को अपना बन्धु समझकर किसी से विरोध न कर साम्यभाव धारण करना चाहिए ।।3।।

रागबंध पदोसं च हरिसं दीणभावयं।
उस्सुगत्तं भयं सोगं, रदिमरदिं च वोस्सरे ।।4।।

अर्थ—मैं राग से किया हुआ कर्मबंध, अनिष्ट संयोग और इष्ट वियोग होने से उत्पन्न हुआ द्वेष, विषय प्राप्ति से उत्पन्न हुई दीनता, अभिमान से उत्पन्न हुई मदोन्मत्तता, इस लोक और परलोक सम्बन्धी भय, इष्ट वियोग से उत्पन्न हुआ शोक, परवस्तु की आकांक्षा रूप मनोविकार से उत्पन्न हुआ रति-भाव और अरतिभाव आदि समस्त पर द्रव्य से राग-द्वेष, हर्ष-विषाद आदि व्यामोहता का परित्याग करे और आत्मा की परम विशुद्धि अवस्था का विचार करे ।।4।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हा दुट्ठकयं हा दुट्ठ चिंतियं, भासियं च हा दुट्ठं ।
अंतो अंतो डज्झमि, पच्छुत्तावेण वेयंतो ।।5।।

अर्थ—हाय ! हाय ! मैंने दुष्ट कर्म किए, हाय ! हाय !! दुष्ट कर्मों का बराबर चिन्तवन किया । हाय ! हाय ! मैंने दुष्ट मर्म-भेदक वचन कहे। इस प्रकार मन, वचन और कार्य की दुष्टता से मैंने अनन्त कुत्सित कर्म किए, इन कर्मों के बदले अब मुझे अत्यन्त पश्चात्ताप होता है, और इस अज्ञान दशा से मेरा अन्तः-करण अत्यन्त क्लेशित हो रहा है। मैं कृत कर्मों का जैसे स्मरण करता हूं वैसे मुझे मेरी आत्मा पर अतिशय ग्लानि उत्पन्न होती है और पश्चात्ताप होता है ।

भावार्थ—परम पवित्र अरहन्त भगवान के समक्ष इस प्रकार अपने मन, वचन, काय से किए हुए दोषों को कहे, आलोचना करे गर्हा करे और आत्मनिंदा पूर्वक प्रतिक्रमण करे ।।5।।

दव्वे खेत्ते काले, भावे य कदा वराहसोहणयं ।
णिंदणगरणजत्तो, मणवयकायेण पडिक्कमणं ।।6।।

अर्थ—द्रव्य क्षेत्रकाल और भाव के निमित्त से किसी जीव की विराधना अथवा प्राणपीड़ा हुई हो, वह मैं आत्मनिंदा और गर्हा (दोषों को चिंतवन पूर्वक ग्लानि का होना) पूर्वक मन, वचन, काय की शुद्धि से परित्याग करता हूं ।।6।।

गद्य—एइंदिय—बेइंदिय—तेइंदिय—चउरिंदिय पंचेंदिय पुढविकाइय, आउकाइय, तेउकाइय, वाउकाइय वणप्फदिकाइय, तस्सकाइयाएदेसि उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो कदो वा कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमणिदो, तस्समिच्छामि दुक्कडं ।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अर्थ—एकेन्द्रिय जीव (जिनके एक स्पर्शन इन्द्रिय ही होती है) दो इन्द्रिय जीव (जिनके स्पर्शन और रसना ये दो इन्द्रिय हों) तीन इन्द्रिय जीव (जिनके स्पर्शन, रसना और घ्राण ये तीन इन्द्रिय हों) चौइन्द्रिय जीव (जिनके स्पर्शन, रसना, घ्राण और चक्षु ये चार इन्द्रिय हों) पांच इन्द्रिय जीव (जिनके स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और श्रोत ये पांच इन्द्रिय हों पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय और त्रस (दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय जीवों को त्रस कहते हैं।) उन त्रस कार्य के जीवों को मैंने स्वत: मारे हों, दूसरे से मरवाये हों, अन्य के मारने पर अनुमोदना की हो। अथवा उक्त प्रकार के जीवों को सन्ताप दिया हो, दूसरे से सन्तापित करने में सहमत हुआ हो अथवा प्राणियों के अंगोपांग का वियोग किया हो, कराया हो, करते को भला माना हो, इत्यादि अनेक प्रकार मुझसे जिन जीवों को पीड़ा हुई है, उससे उत्पन्न हुए पाप कर्मों का परित्याग करता हूं। मन, वचन, काय और कृतकारित अनुमोदना से जिन जीवों का घात मुझसे हुआ है वह निरर्थक हो।

ग्यारह प्रतिमाओं के नाम

गाथा—दंसण वय समाइ, पोसहय सचित्त रायभत्तोय।
बंभारम्भ परिग्गह, अणुयणुमुद्दिट्ठ देसविरदे॥

गद्य—एयासु यथाकहिदपडिमासु पमादाइकयाइचार-सोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं, होउ मज्झं॥

अर्थ—1.दर्शन, 2. व्रत, 3. सामायिक, 4. पौषधोपवास 5. सचितत्याग, 6. रात्रिभुक्तत्याग, 7. ब्रह्मचर्य, 8. आरम्भत्याग,

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

9. परिग्रह त्याग, 10. अनुमति त्याग, 11. उद्दिष्ट त्याग की ग्यारह प्रतिमा होती हैं। इन प्रतिमाओं का व्यक्त रूप अथवा समस्त रूप, अभ्यास रूप अथवा व्रत रूप पालन नैष्ठिक श्रावक करते हैं। प्रतिमा धारण चाहे किसी प्रकार हो परन्तु सम्भव है कि प्रमाद और अज्ञान से अतिचार-अनाचार अथवा व्रतभंग रूप दोष लगे हों, उसकी मैं उपस्थापना करता हूं। अर्थात् दो प्रतिमाधारी दो प्रतिमाओं के अतिचारों का स्मरण करे, तीन प्रतिमाधारी तीन का, इस प्रकार जितनी प्रतिमा का वह पालन करता हो उतनी प्रतिमाओं का उच्चारण करे।

गद्य—अरहंत—सिद्ध—आइरिय—उवज्झाय—सव्वसाहु—सक्खियं सम्मत्त-पुव्वगं सुव्वदं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु मे भवदु मे भवदु।

अर्थ—अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्वसाधु इन पञ्चपरमेष्ठी की साक्षी पूर्वक सम्यक्त्व सहित उत्तम व्रतों की दृढ़ता मेरे हो। सम्यग्दर्शन सहित सदाचार की प्राप्ति मेरे हो।

गद्य—देवसियं (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाइच्चारविसोहिणिमित्तं पुव्वाइरियकमेण आलोयण सिद्धभक्तिकाउसग्गं करेमि।

अर्थ—दिवस सम्बन्धी, शारीरिक, मानसिक और वाचनिक कार्य करने में जो दोष मैंने किए हों, उनका प्रतिक्रमण करता हूं। और अपने मन की विशुद्धि के लिए अपने किए हुए दोषों की बार-बार आलोचना करता हूं। दोषों से सर्वथा मुक्त श्री सिद्ध परमात्मा का स्वरूप चिन्तवन कर सिद्ध भक्ति में लीन होता हूं।

विशेष—प्रतिक्रमण चार प्रकार का होता है। दैवसिक (दिवस

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

सम्बन्धी) रात्रिक (रात्रि सम्बन्धी) (15 दिन सम्बन्धी) पाक्षिक मासिक-चातुर्मासिक। और सांवत्सरिक यदि दिवस का करना है तो 'देवसिय' शब्द लगाओ। यदि रात्रि का प्रतिक्रमण करना हो तो 'राइय' शब्द लगाओ जैसा प्रतिक्रमण करना हो वैसे शब्द की योजना यहां पर करनी चाहिए। श्रावकों के लिए यही प्रतिक्रमण मासिक, चातुर्मासिक व वार्षिक भी समझना चाहिए।

सामायिक दण्डक

गाथा—"णमो अरहन्ताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं। णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।1।।

गद्य—चतारिमंगलं, अरिहन्तामंगलं, सिद्धामंगलं, साहूमंगलं, केवलिपण्णत्तोधम्मोमंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहन्ता लोगुत्तमा, सिद्धालोगुत्तमा, साहूलोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तोधम्मोलोगुत्तमो चत्तारिसरणं पव्वज्जामि, अरिहन्ते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

विशेष—इसका अर्थ पहले दिया जा चुका है।

गद्य—अढाइज्जदीवदोसम्ममुद्देसु पण्णारस कम्मभूमीसु जाव अरहन्ताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलिवाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं पारयडाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसगाणं, धम्मणायगाणं, धम्मवरचाउरंगचक्कवट्टीणं देवाधिदेवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरत्ताणं सदा करेमि किरियम्मं। करेमि भंते!

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

पडिक्कमणं सावज्जोगं पच्चक्खामि, जावन्नियमं तेविहेण मणसा, वचिया, कायेण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतंपि ण समणु-मणामि तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामिअ पाणं जाव अरहन्ताणं णमोक्कारं पज्जुवासं करेमि तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

विशेष—सिद्धभक्ति के लिए यहां पर णमोकार मन्त्र का जाप करना चाहिए ।

अर्थ—अढाई दीप और पन्द्रह कर्मभूमि में होने वाले संयोग केवली (अरहन्त) संसार के भय को नाश करने वाले तीर्थंकर, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्वसाधु ये पांच परमेष्ठी हैं । ये सत्य मार्ग का प्रत्यक्ष अनुभव कराते हैं । इसलिए इनकी साक्षी पूर्वक सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र को धारण करता हूं । दूसरों को इस सत्यमार्ग पर चलने का उपदेश करूंगा । मुझसे इस मार्ग में चलते हुए अतिचार आदि दोष लगे हों, उनकी शुद्धि के लिए मन वचन काय की विशुद्ध भावना से आत्मनिंदापूर्वक त्याग करता हूं ॥

गाथा—

थोस्सामिहं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंतजिणे ।
णरपवरलोयमहिए, विहुयरयमले महप्पण्णे ॥1॥

लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहन्ते कित्तिस्से चउवीसं चेव केवलिणो ॥2॥

उसहमजियं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥3॥

सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयलसेयं च वासुपुज्जं च ।
विमलमणंत्तं भयवं, धम्मं संति च वंदामि ॥4॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

कुन्थुं च जिणवरिदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं।
वंदामि रिड्ढणेमिं, तहपासं वड्ढमाणं च ॥5॥

एवंमए अभित्थुआ, बिहुयरयमला पहीणजरमरणा।
चौवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥6॥

कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा।
आरोग्गणाणलाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥7॥

चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहियं पयासंता।
सायरमिव गंभीरा, सिद्धासिद्धिं मम दिसंतु ॥8॥

यावंति जिन चैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये।
तावंति सततं भक्त्या त्रिः परीत्य नमाम्यहम् ॥9॥

अर्थ—कर्म मल रहित, त्रिलोक पूज्य और ज्ञान से परिपूर्ण तीर्थंकर केवली भगवान और केवली प्रणीत जिन धर्म को पुनः पुनः स्मरण कर वन्दना करता हूं। ऋषभादि वीरान्त चतुर्विंशति देव को भाव-भक्ति से वन्दना करता हूं। ये चौबीस भगवान् जन्म-मरणादि समस्त दोष रहित, परम शान्ति, अनन्त सुख सम्पन्न मंगलमय, लोकोत्तम और शरणभूत है। सिद्ध परमात्मा भी समस्त कर्म मल रहित, परम विशुद्ध, शुद्ध चैतन्य रूप अनंत गुणों के पिंड हैं। शुद्धात्मा का प्रत्यक्ष दर्शन इनकी भक्ति से प्राप्त होता है। तीर्थंकर केवली, परम ध्यान की मूर्ति होने से योगी हैं। जिन चैत्यालय यह धर्म का आयतन है। इसलिए मैं प्रतिक्रमण करते समय तीर्थंकर, केवली, सिद्ध, जिन धर्म और जिन चैतन्यालय की वन्दना करता हूं।

श्लोक—श्रीमते वर्द्धमानाय नमो नमितविद्विषे।
यज्ज्ञानान्तर्गतं भूत्वा, त्रैलोक्यं गोष्पदायते ॥1॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अर्थ—महादि भयंकर शत्रुओं का नाश करने वाले और लोक को जानने वाले ऐसे श्री वर्द्धमान भगवान् के लिए नमस्कार है।

लघु सिद्ध भक्ति

तव सिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमंस्सामि ॥2॥

अर्थ—तप, नयज्ञान, संयम, चरित्र, ज्ञान और दर्शनादि से सिद्ध पद को प्राप्त हुए सिद्ध परमात्मा को नमस्कार है।

गद्य—इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाणसम्मदंसण सम्मिचरित्तजुत्ताणं, अट्ठविहकम्ममुक्काणं अट्ठगुणसंपण्णाणं उड्ढलोयमत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं, अतीदाणागदवट्टमाणकालत्तयसिद्धाणं सव्वसिद्धाणं, णिच्चकालं, अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

अर्थ—हे भगवान्। मैं सिद्ध भक्ति धारण करने के लिए दिवस सम्बन्धी कृत कर्मों की आलोचना करता हूं। सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्रमयी आठ कर्म रहित, अष्ट गुण सहित लोक के अन्त भाग में विराजमान तप, ज्ञान, संयम, सम्यक्चारित्र दर्शन और परमध्यानादि उत्तम गुणों से सिद्ध अवस्था को प्राप्त हुए भूत, भविष्य और वर्तमानकाल सम्बन्धी, समस्त, सिद्ध भगवन्तों की मैं अभ्यर्थना करता हूं, पूजा करता हूं; गुणों का

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

चिन्तवन करता हूं, वंदना करता हूं, नमस्कार करता हूं। सिद्ध भक्ति से मेरे दु:खों का नाश, सम्यग्दर्शनज्ञान-चारित्र की प्राप्ति सुगति गमन, समाधिमरण और जिन गुण प्राप्त हों।

भावार्थ—मेरी आत्मा सिद्धात्मा के समान शुद्ध अनन्त गुण मय सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्रमयी निष्कलंक और अक्षय है। परन्तु कर्ममल से विकृत रूप हो रही है। मेरी आत्मा परम शान्त और सुखी हो इस भावना की सिद्धि के लिए सिद्धभक्ति करता हूं। इस प्रकार सिद्धों के गुणों का चिन्तवन कर आत्मस्वरूप का विचार करते हुए अपने दोषों की आलोचना करे।

श्रावक की ग्यारह प्रतिमा सम्बन्धी दोषों की आलोचना—

गद्य—इच्छामि भंते ! देवसियं (राइयं) आलोचेउ तत्थ:—

1. दर्शन प्रतिमा

गाथा—पंचुम्बर सहियाइं, सत्तवि वसणाइं जो विवज्जेइ।
सम्मत्तविसुद्धमई, सो दंसण सावओ भणिओ ॥1॥

अर्थ—सम्यग्दर्शन से विशुद्ध है ज्ञान जिसका ऐसा सत्पुरुष जो पञ्च उदम्बर बड़, पीपल, ऊमर, कठूम्बर (अंजीर) और गूलर—इन फलों एवं तीन मकारों—मद्य, मांस, मधु का त्यागकर अष्ट मूल गुणों को धारण करता है तथा सप्त व्यसनों का त्याग करता है उसे दार्शनिक श्रावक कहते हैं।

2. व्रत प्रतिमा

पंच य अणुव्वयाइं, गुणव्वयाइं हवन्ति तह तिण्णि।
सिक्खावयाइ चत्तारि, जाण विदियम्मि ठाणम्मि ॥2॥

अर्थ—पांच अणुव्रत—1. अहिंसाणुव्रत, 2. सत्याणुव्रत,

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

3. अचौर्याणुव्रत, 4. ब्रह्मचर्याणुव्रत, 5. परिग्रह परिमाणव्रत तथा तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रतों को जो नियम से पालन करता है वह व्रत प्रतिमा धारक है ।।2।।

पंचाणुव्रत

पाणादिवादि विरदि सच्चमदत्तस्स वज्जणं चेव ।
थूलयड बंभचेर, इच्छाये गंथपरिमाणं ।।1।।

अर्थ—हिंसा, झूठ, चोरी और कुशील का स्थूल रूप में त्याग और परिग्रह का परिमाण ये पांच अणुव्रत हैं ।।1।।

जे तसकाइज जीवा, पुव्व गिद्दिट्ठा ण हिंसिदव्वा ।
ए इंद्रिय विणुकारण, तं पढमं वदं थूलम् ।।3।।

अर्थ—जो आंखों से दीख सके—ऐसे त्रस जीवों को नहीं मारना तथा विना प्रयोजन एकेन्द्रिय जीवों की हिंसा नहीं करना सो प्रथम अहिंसाणुव्रत है ।।3।।

अलियं ण जंपणीयं, पाणिवहं करन्तु सच्चवय णं पि ।
रायेण य दोसेण य णेयं विदियं वयं थूलं ।।4।।

अर्थ—राग द्वेष से असत्य वचन नहीं कहना, और जिन वचनों के कहने से किसी जीव की हिंसा होती हो ऐसा वचन भी नहीं बोलना सो सत्याणुव्रत है ।।4।।

पुरगामि पट्टणाइसु, पडियं गट्ठं णिहियं विसरीयं ।
परदव्वमगिण्हं, तस्य होव थूल वयं तिदियं ।।5।।

अर्थ—नगर, ग्राम और चौराहा आदि में पड़ा हुआ, भूला

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हुआ, गिरा हुआ, पराया (अन्य का) द्रव्य नहीं लेना सो अचौर्याणुव्रत है।

पव्वेसु इत्थि सेवा, अणंगकीड़ा सया विवज्जंतो।
थूलयड बंभचारी जिणेहिं भणिओ पवयणम्मि ॥6॥

अर्थ—1. पर्व के दिवसों में सर्वथा स्त्री मात्र त्याग करना, 2. परस्त्री का सेवन नहीं करना, और अनंत क्रीडा नहीं करना सो ब्रह्मचर्याणुव्रत है ॥6॥

जं परिमाणं कीरइ, धण धाण्ण हिरण्ण कंचणाईणं।
तं जाण पंचमबयं, णिद्दिट्ठ मुवासयाज्जयणे ॥7॥

अर्थ—1. क्षेत्र (खेती), 2. वास्तु (रहने का मकान), 3. हिरण्य (चांदी), 4. सुवर्ण (सोना), 5. धन (गाय, बैल, पशु आदि), 6. धान्य (अनाज), 7. दासी (नौकरानी), ८. दास, 9. कुप्य (वस्त्र), 10. भांड (वर्तनादि) इन धन, धान्य, रत्न सुवर्ण आदि परिग्रह का परिमाण सो परिग्रह परिमाण नाम का अणुव्रत है। इस प्रकार ये पांच अणुव्रत हैं ॥7॥

पुव्वुत्तरदक्खिण पच्छिमासु काऊणजोयणपमाणं।
परदो गमणणियत्ती, दिसि गुणव्यं पढमं ॥8॥

अर्थ--पूर्व, उत्तर, दक्षिण और पश्चिमादि दिशाओं में योजनादि का परिमाण कर उसके बाहर नहीं जाना सो प्रथम गुणव्रत दिग्व्रत है ॥8॥

वयभंगकारणं होई जम्मि देसम्मि तत्थ णियमेण।
कीरइ गमणणियत्ती, तं जाणं गुणव्वयं विदियं ॥9॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अर्थ—(दिग्व्रत की सीमा को घड़ी-घण्टा आदि काल के विभाग से और भी कम कर उससे बाहर नहीं जाना तथा) जिस देश में जाने से व्रत के भंग होने की सम्भावना हो, ऐसे देश में नहीं जाना सो द्वितीय देशव्रत नामक गुणव्रत है ॥8॥

अयदंड पास विक्किय, कूडतुला माणकूड परिमाणं।
जं संग हो ण कीरइ, तं जाण गुणव्वयं तिदियं ॥ 9 ॥

अर्थ—यद्यपि 1. पापोपदेश 2. पिंसादान, (शस्त्रों को देना) 3. दुःश्रुति, 4. अपध्यान (बुरा सोचना) और 5. प्रमादचर्या भेद से अनर्थ दण्ड पांच प्रकार का है, तथापि इसके अनन्त भेद होते हैं, इन सबका यही अभिप्राय है कि जिन कार्यों से कुछ प्रयोजन विशेष सिद्ध न होता हो और हिंसा तथा क्लेश परिणाम अधिक होता हो ऐसे लोहे के शस्त्र, लाठी आदि हिंसा का व्यापार, झूठी तराजू, खोटे बाट आदि का त्याग करना सो तृतीय गुणव्रत है ॥9॥

जं परिमाणं कीरइ, मंडण तंबूल गंध पुपफाणं।
तं भोयविरइ भणि यं, पढमं सिक्खावयं सुत्ते ॥10॥

अर्थ—(भोग और उपभोग से विषयों का सेवन होता है। भोग उसे कहते हैं जो एक बार भोगने में आये) शरीर को श्रृंगार करने वाली चीजें, पान, सुगन्धित पदार्थ, तेल इत्र पुष्पादि का परिणाम करना सो भोग विरति शिक्षाव्रत है ॥10॥

सगसत्तीए महिला, वत्थाभरणाण जंतु परियाणं।
तं परिभोय णिव्वुत्ती, विदियं सिक्खावयं जाणे ॥11॥

अर्थ—(बार-बार भोगने में आवे उसे उपभोग कहते हैं) उप-

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भोग रूप स्त्री, वस्त्र, आभरण आदि के सेवन करने का नियम करना सो दूसरा शिक्षाव्रत है ॥11॥

अतिहिस्स संविभागो, तिदियं सिक्खावयं मुणेयव्वं ।
तत्थ वि पंचाहियारा, णेया सुत्ताग मग्गेण ॥12॥

अर्थ—(उत्तम, मध्यम और जघन्य भेद से पात्र तीन प्रकार हैं।) पात्रों को चार प्रकार का दान देना तथा चैत्य, चैत्यालय सिद्धक्षेत्र, शास्त्र, स्वाध्यायालय, विद्यालय, औषधालय में दान देना सो तृतीय शिक्षाव्रत है ॥12॥

धरिऊण वत्थमेत्तं परिग्गहं छंडिऊण अवसेसम् ।
सगिहे जिणालये वा, तिविहाहारस्स वोस्सरणम् ॥
जंकुणदि गुरुपयासे, सम्ममालो इऊणतिविहेण ।
सल्लेहणं चउत्थं, सुत्ते सिक्खावयं भणियम् ॥

अर्थ—वस्त्रामात्र परिग्रह को रखकर अवशेष समस्त परिग्रह का त्याग कर अपने घर में अथवा जिनालय में सल्लेखना (समाधिमरण) धारण करे। व्रतफलसिद्धि, समाधि धारण से ही होती है। इतना ही नहीं, किन्तु समाधिमरण, आत्मसिद्धि का अन्तिम उपाय है—सुगति का बीज है।

समाधिमरण-विधि

प्रतिकार रहित मरण के कारण उपस्थित होने पर साम्य भाव और शान्ति से धैर्यपूर्वक, क्रोधादि विकार रहित होकर शरीर का विसर्जन करना समाधिमरण है। उसकी सिद्धि के लिए क्रम से तीन प्रकार के आहार का त्यागकर गर्म जल अथवा तक्र (छाछ-मट्ठा) का सेवन करे, और आवश्यक होने पर उसका

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भी त्याग करे। अपनी पर्याय में किये हुए भले बुरे कर्मों की आलोचनापूर्वक प्रतिक्रमण करे पश्चात्ताप करे और सबसे क्रोधादि विकार भावों की क्षमा मांगकर शांति से णमोकार मंत्र का ध्यान धरता हुआ शरीर को छोड़े। यह चौथा सल्लेखना नाम का शिक्षा व्रत है। इस प्रकार दूसरी प्रतिमा धारण करने वाला श्रावक इन बारह व्रतों का पालन करता है।

3. सामायिक प्रतिमा

जिणवयण धम्मचेइय, परमेट्ठि जिणयालयाण णिच्चम्पि।
जं बंदणं तिआलं, कीरइ सायाइयं तं खु ॥3॥

अर्थ—जिनदेव, जिनवचन, जिनधर्म, जिनालय और पंच परमेष्ठी के गुणों का चिन्तवन, ध्यान, वन्दना, स्तुति आदि त्रिकाल करना सो सामायिक है। समता से राग द्वेष और उसके उत्पादक कारणों का परित्याग करना सामायिक प्रतिमा है। बाह्य और आभ्यन्तर शुद्धि को धारण कर, पूर्व अथवा उत्तर दिशा की तरफ मुख कर एकान्त निर्जन स्थान में 12 आवर्त्त को करता हुआ 4 प्रणाम (दिशावर्ती चैत्य, चैत्यालय, मुनि आदि को) चारों दिशा में करता हुआ स्थिर मन, वचन, काय से समता पूर्वक सामायिक करे। सामायिक में कुत्सित ध्यान और चिंतन छोड़ देनी चाहिए ॥3॥

4. प्रोषध प्रतिमा

उत्तम मज्झ जहण्णं तिविहं पोसहविहाणमुद्दिट्ठं।
सगसत्तीएमासम्मि, चउसु पव्वेसु कायव्वं ॥4॥

अर्थ—प्रोषधोपवास, उत्तम, मध्यम और जघन्य के भेद से

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तीन प्रकार का है। उत्तम प्रोषधोपवास 16 पहर का होता है, इसमें धारण और पारणा के दिवस एकासन पूर्वक उपवास करके समस्त प्रकार के आरम्भ का त्याग कर देना चाहिए। निर्भय होकर निशल्य होकर पंच-परमेष्ठी का ध्यान धरना चाहिए। मध्यम प्रौषधोपवास 8 प्रहर का होता है और इसमें भी हिंसक आरम्भों को छोड़कर उपवास करना चाहिए। जघन्य प्रोषधोपवास 8 प्रहर का होता है यह भी आम्ल अथवा एक अन्न को ग्रहण कर स्वाध्यायादि से शांति-लाभ करते हुए धर्म सेवन से होता है। पर्व के दिन प्रोषधोपवास करना चौथी प्रतिमा है ॥4॥

5. सचित्तत्याग प्रतिमा

जं वज्जिदि हरिदं, तय पत्त पवाल कंदफल वीयं।
अप्फासुगं च सलिलं, सचित्तणिव्वत्तिमं ठाणम् ॥5॥

अर्थ—सचित्त वस्तु-हरित अंकुर पत्र, फल, कंद, बीज और अप्रासुक जलादि सेवन नहीं करना सो पंचम सचित त्याग प्रतिमा है ॥5॥

6. दिवामैथुनत्याग (यां रात्रिभोजनत्याग) प्रतिमा

मण वयण काय कद, कारिदाणुमोदेहिंमेहुणं णवधा।
दिवसम्मि जो विवज्जदि, गुणम्मि जो सावओछट्ठो ॥6॥

अर्थ—मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदना इन नौकोटियों से दिवस में मैथुन सेवन नहीं करना सो दिवा-मैथुन त्यागनामा छठी प्रतिमा है ॥6॥ (किन्हीं आचार्यों ने नौ कोटि से रात्रि भोजन त्याग करने को रात्रिभोजन त्याग प्रतिमा के नाम से भी इसे प्रतिपादन किया है।)

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

7. ब्रह्मचर्य प्रतिमा

पुव्वुत्तणव विहाणंपि, मेहुणं सव्वदा विवज्जंतो।
इत्थिकहादि णिवित्ती, सप्तम गुण बंभचारी सो ॥7॥

अर्थ—पूर्वोक्त नव कोटियों (मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदना) से सदा के लिए स्त्री मात्र से मैथुन का त्याग करना और स्त्री कथादि भी न करना सप्तम ब्रह्मचर्य प्रतिमा है ॥7॥

8. आरम्भ त्याग प्रतिमा

जं किं पि गिहारभं, बहुथोबं वा सया विवज्जेदि।
आरंभणिवित्तमदी, सो अट्ठम सावओ भणि ओ ॥8॥

अर्थ—आरम्भ का त्याग करने की बुद्धि से जो कुछ भी थोड़ा या बहुत गृह-सम्बन्धी आरम्भ होता है—उसको सदा के लिए त्याग करने वाला श्रावक अष्टम आरम्भ त्याग प्रतिमा का धारी कहलाता है ॥8॥

9. परिग्रह त्याग प्रतिमा

मोत्त ण वत्थमितं, परिग्गहं जो विवज्जदेसेसं।
तत्थवि मुच्छं ण कर दि, वियाण सो सावणो ण वमो ॥9॥

अर्थ—मात्र वस्त्र को छोड़कर अवशेष सम्पूर्ण परिग्रह का त्याग कर देना तथा रखे हुए आवश्यक वस्त्रों में भी ममत्व न रखना सो परिग्रह त्याग नामक नवमी प्रतिमा कहलाती है ॥9॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

10. अनुमत त्याग प्रतिमा

पुट्ठो वा अपुट्ठो वा, णि यगेहिं परेहिं सव्वगिहकज्जे ।
अणुमणणं जो ण कुणदि, वियाण सो सावओ दसमो ।।10।।

अर्थ—जो अपने अथवा अन्य के गृहकार्य सम्बन्धी आरम्भ में बिना पूछे या पूछने पर भी अनुमति नहीं देता है सो, दसवीं अनुमति त्याग प्रतिमा धारक है ।।10।।

11. उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा

णवकोडीसु विशुद्धं, भिक्खायरणेण भुंजं ।
जायणरहियं जोग्गं, एयारस सावओ सो दु ।।11।।

अर्थ—नवकोटि से विशुद्ध, भिक्षा के आचरण पूर्वक, (भिक्षा-वृत्ति से) दीनता रहित, भोजन करना सो ग्यारहवीं उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा का धारक है ।।11।

एयारसम्मि ठाणे, उक्किट्ठो सावओ हवई दुविहो ।
वत्थेह धरो पढमो, कोवीण परिग्गहो विदिओ ।12।।

अर्थ—ग्यारहवीं प्रतिमा में उत्कृष्ट श्रावक के क्षुल्लक ऐल्लक ऐसे दो भेद हैं । प्रथम क्षुल्लक खण्ड वस्त्र (चद्दर तथा लंगोट) का रखने वाला और दूसरा ऐल्लक कोपीन मात्र रखने वाला होता है ।।12।।

तव वय णियमावासय, लोचं कारेदि पिच्छगिण्हेदि ।
अणुवेहा धम्मझाणं, करपत्ते एय ठाणम्मि ।।13।।

अर्थ—उभय प्रकार के उत्कृष्ट श्रावक तप, व्रत, नियम,

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

संयम, ध्यान और प्रथम की समस्त प्रतिमाएं सदाचार नियमसे पालन करते हैं। उनमें प्रथम क्षुल्लक निर्दोष आहार तथा कटोरे आदि में एक समय भोजन करते हैं और द्वितीय ऐलक हाथ में भोजन करते हैं, ये दोनों ही कषायों के विजयी एकादश प्रतिमा के धारक हैं ।।13।।

(इस प्रकार संक्षेप में पाक्षिक, नैष्ठिक श्रावक का सदाचार है। इस सदाचार के पालन करने से उभय लोक की सिद्धि होती है। इतना ही नहीं किन्तु यह सदाचार नीतिमय होने से राज-भयादि रहित पूर्ण सुख का सत्य मार्ग है।

इत्थं मे जो कोई देवसिओ (राइयो) अइचारो अणायारो तस्स भन्ते! पडिक्कमामि पडिक्कमंतस्स मे सम्मतमरणं, समाहिमरणं पंडियमरणं, वीरियमरणं दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

अर्थ—इस प्रकार उक्त व्रतों में मुझ से जो दिवस सम्बन्धी (रात्रि -सम्बन्धी) अतिचार लगे हों उनका प्रतिक्रमण करता हूं। इससे यह भी चाहता हूं कि समाधिमरण आदि उत्तम गुण प्राप्त हों।

दंसण वय सामाइय, पोसह सचित रायभत्तोय।
बंभारंभ परिग्गह, अणुमणमुद्दिट्ठ देस विरदेदे।9।

एयासु जधा कहिद पडिमासु पमादाइ कयाइचार सोहणं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं अरहन्त सिद्ध आयरिय उवज्झाय सव्व-साहुसक्खियं, सम्मत्तपुव्वगं, सुव्वदं, दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु मे भवदु, मे भवदु।

अथ देवसिय (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाइचारविसोहिणि-मित्तं पुव्वायरियकमेण पडिक्कमणभत्तिकायोत्सर्गं करेमि।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

(णमोकार मंत्र का जाप 9 बार)

इस प्रकार कायोत्सर्ग (णमोकार मंत्र का जाप 9 बार) देकर पुन· "णमो अरहन्ताण" यहीं से प्रारम्भ कर 'यावंति जिन चैत्यानि' इस श्लोक पर्यन्त मूल पाठ पढ़कर पुनः कायोत्सर्ग धारण करे।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥2॥

णमोजिणाणं 2 णमो णिसीहिय 2 णमोत्थुदे 3 अरहन्त, सिद्ध, बुद्ध, णीरय, णिम्मल, सममण, सुभमण, सुसमत्थ, समजोग समभाव, सल्लघट्ठाणं प्रतिकमण-भक्ति-सन्नघत्ताण, णिब्भय, णिराय णिद्दोस णिम्मोह, णिम्मम, णिस्संग, णिंसल्ल, माणमाय-मोसमूरण, तवप्पहावण, गुणरयण, सीलसायर, अणंत, अप्पमेय, महदि, महावीर वड्ढमाण, बुद्धिरिसिणों चेदि।

मम मंगलं अरहन्ता य सिद्धा, य बुद्धा, य जिणाय, केवलिणो ओहिणाणिणो, मणपज्जयणाणिणो, चउदसपुव्वंगामिणो, सुदस-मिदिसमिद्धाय, तवोय वारस विहो तवसी गुणाय, गुणवंतोय, महारिसी तित्थं तित्थंकराय, पवयणं पवयणी य, णाणं णाणी य, दंसणं दंसणीय, संजमो, संजदा य, विणओ विणीदा य, बंभचेर-वासो, बंभचारी य, गुत्तीओचेव गुत्तिमंतोय, मुत्तियोचेव मुत्तिय मंतोय, सभिदीओचेवसमिदिमंतोय, ससमय परसमय विदूखंति खवगा य, खीणमोहा य खीणवंतोय, बोहिय बुद्धाय, बुद्धिमंतोय चेइयरुक्खाय चेइयाणि। उड्ढमहतिरियलोए सिद्धायदणाणि णमस्सामि सिद्धणिसीही याओ अट्ठावय पव्वेय, सम्मेदे, उज्जंते चंपाए, पावाए, मज्झिमाए, हत्थिवालियसहाय, जाओ अण्णाओ

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

काओवि सिद्ध णिसोहियाओ जीवलोयम्मि ईसिपव्य भारतलग-याणं सिद्धाणं कम्भचक्कमुक्काणं णोरयाणं गुरु आइरिय उवज्झायणं पव्वसित्थेर कुलयराणं चाउवण्णोय समण सघोय, भरहेरा-वएसु दससु-पंचसु जेलोए सन्ति साहुओ संजदा तवसो एदे मम मंगलं पवित्तं एदेहं मंगलं करेमि भावदो विसुद्धोसिरसा अहि-वंदिऊण सिद्धेकाऊण मंज्जलि मत्थयम्मि पडिलेहिए अट्ठकत्तरिओतिविहं तियरयण सुद्धो।

अर्थ—हे जिनराज ! आपके लिए नमस्कार है। स्तुत्य-वंद-नीय, मंगलमय अरहन्त ! भगवान् ! मेरा मंगल (कल्याण) कीजिए।

हे महावीर ! आपका स्तवन करता हूं। आप राग, द्वेष, मोह, ममत्व-परिग्रह, शल्य (माया-मिथ्या-निदान) और कषाय रहित हैं। आपने साम्यभाव धारण कर समस्त कर्मों का नाश किया है। शुभ भावों को धारण कर निर्भय हो गए हों। आपके तप ही प्रधान योग हैं, इसलिए आप गुण-रत्न हो, शील के सागर हो, अप्रमेय हो, महान् हो, मुनि, महर्षि और ज्ञानीजनों से पूज्य लोक शिरोमणि, सर्वज्ञ हो, कर्ममल रहित सिद्ध हो (भविष्य में) शुद्ध हो, अनन्त गुणों के पुंज हो, प्रभो ! मुझे मंगल करो।

केवली, अरहन्त, तीर्थंकर, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, श्रुतकेवली, शास्त्रज्ञानी, पवित्र तप और तप के धारक यतीश्वर, गुणी (ऋद्धिधारी मुनीश्वर को गुणी कहते हैं) गुणवान्, महर्षि सिद्धान्त, सिद्धान्त ज्ञानी, ज्ञानी सम्यग्दृष्टि, संयमी, विनय करने योग्य, ब्रह्मचारी गुप्तिधारक, समिति पालक, स्वसमय के ज्ञाता, क्षीणमोह ज्ञानी, ऋषि, महर्षि और ऋद्धिधारक, मुनीश्वर मेरा कल्याण करो।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

तीन लोक में जितनी जिन प्रतिमा, जिन चैत्यालय, सिद्ध-क्षेत्र और तीर्थक्षेत्र हैं उनको मैं नमस्कार करता हूं। अष्टापद सम्मेदाचल, गिरनार, चम्पापुर, पावापुर, हस्तिनापुर आदि तीर्थों में और विदेह क्षेत्र तथा समस्त कर्मभूमि से जितने जीव कर्ममल रहित सिद्ध, बुद्ध और निर्मल हो गए हैं, वे चारों प्रकार के संघ का मंगल करो, पवित्र करो, शान्ति करो। विशुद्ध भावना से मैं अष्टांग (हाथ पैर मस्तक और छाती नवाकर) नमस्कार करता हूं। मेरे कर्मों का नाश करो।

पडिक्कमामि भंते! दंसण पडिमाए, संकाए, कंखाए, विदि-गिच्छाए, परपासंडपसंसणाए, पसंथुए, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचिया, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमणि दो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥1॥

अर्थ—हे भगवन्! कृत कर्मों का पश्चात्तापपूर्वक प्रतिक्रमण करता हूं। दर्शन प्रतिमा के पालन करने में जिन मार्ग के शंका की हो, शुभाचरण पालन कर संसार सुख की आकांक्षा (निदान) की हो, धर्मात्माओं के मलिन शरीर को देखकर ग्लानि की हो, मिथ्या मार्ग और उसके सेवन करने वालों की प्रशंसा की हो, इत्यादि जो मैंने दिवस या रात्रि सम्बन्धी अतिचार मन, वचन, काय से किए हों, कराए हों, अन्य के करने में अनुमति प्रदान की हो तत्सम्बन्धी समस्त कार्यों की आलोचना करता हूं, पश्चात्ताप करता हूं, और वे कर्म निरर्थक हों, ऐसी इच्छा करता हूं।

गद्य—पडिक्कमामि भंते! वद पडिमाए पढमे थूलयडे हिंसाविरदिवदे, वहेण वा, बंधेण वा, छेएण वा, अईभारा-रोहणेण वा, अण्णपाणणिरोहणेण वा, जो मएदेवसिओ (राइयो) अइचारो अणाचारो, मणसा, वचिया, काएण कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणमण्णिदो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥2॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने कृत कर्मों की आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दूसरी व्रत प्रतिमा के अन्तर्गत प्रथम अहिंसाणुव्रत के पालन करने में जीवों को बांधे हों, मारे हों, अंगोपांग छेदे हों, शक्ति से अधिक बोझा लादा हो और अन्न-पान का निरोध किया हो, इत्यादि अनेक अतिचार दिवस व रात्रि सम्बन्धी मुझसे मन, वचन, काय और कृत, कारित अनुमोदना से लगे हों, वे निरर्थक हों, ऐसी मेरी भावना है ॥2॥

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए विदिये थूलयडे असच्चविरदिवदे, मिच्छोपदेसेण वा रहो अब्भक्खाणेण वा, कूडलेह करणेण वा, णायापहारेण वा, सायारमंतभेएण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वच्चिया, काएण, कदो वा, कारिदो वा, करंतो वा, समणमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥3॥

अर्थ—हे भगवान् ! अपने कृत कर्मों की आलोचनापूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दूसरी प्रतिमा के अन्तर्गत स्थूल सत्यव्रत में (1) मिथ्या उपदेश देने से (2) एकान्त में कही हुई बात को प्रकट कर देने से, (3) झूठा लेख लिखने से, (4) धरोहर हरण करने से, (5) किसी के इंगित चेष्टा से अभिप्राय समझ कर भेद प्रकट कर देने से इत्यादि अनेक प्रकार अतिचार, अनाचार, मन, वचन, काया और कृत, कारित, अनुमोदन से हुए हों वे निरर्थक हों ॥3॥

गद्य | पडिक्कामामि भंते ! वद पडिमाए तदिये थूलयडे थेणविरदिवदे थेणपओगेण वा, थेणहरियाणेण वा, विरुद्धरज्जाइक्कमणेण वा, हीणाहियम्माणुमाणेण वा, पडिरूबय ववहारेण वा जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा,

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

वचिया, कायेण, कदो वा, कारिदो वा कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥4॥

अर्थ—हे भगवन् ! अपने कृत कर्मों की आलोचनापूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दूसरी प्रतिमा के अन्तर्गत स्थूल अचौर्याणुव्रत के पालन करने में दिवस सम्बन्धी (रात्रि सम्बन्धी) मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदन से चोरी का प्रयोग बतलाया हो (स्वयं तो चोरी न की हो परन्तु दूसरों को ऐसा व्यापार बतलाना जिससे वह चोरी करे) चोर से अपहरण किए हुए द्रव्य को ग्रहण किया हो, राज्य के विरुद्ध कार्य किया हो (वस्तुओं का कर चुराया हो, रेल की टिकिट आदि में चोरी की हो, राजा की आज्ञा भंग की हो) तोलने के बाट कमती-बढ़ती रखे हों वे सब निरर्थक हों ॥4॥

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए चउत्थे थूलयडे अबंभविरदिवदे, परविवाहकरणेण वा, इत्तरियागमणेण वा, परिग्गहिदापरिग्गहिदागमणेण वा, अणंगकीडणेण वा कामतिव्वाभिणिवेसेण वा जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो अणाचारो, मणसा, वचिया, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥5॥

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दूसरी व्रत प्रतिमा के अन्तर्गत स्थूल ब्रह्मचर्याणुव्रत के पालन करने में दिवस या रात्रि सम्बन्धी मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदन से अन्य के पुत्र-पुत्रियों का विवाह किया हो, व्यभिचारिणी स्त्री के घर के साथ व्यवहार आना-जाना आदि रखा हो, वेश्या कुमारिका और विधवा इत्यादिक परिग्रहीत और

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अपरिग्रहीत स्त्रियों के साथ कामवासना से व्यवहार (बोलना, हंसना आदि) किया हो, काम सेवन के अंगों के सिवाय अन्य अंग से काम चेष्टा की हो, काम के तीव्र विकार से वीभत्स विचार किए हों इत्यादि अनेक प्रकार के दोष(दिवस या रात्रि सम्बन्धी) मुझसे बने हों, दूसरे से कराए हों, अन्य के करने में हर्ष माना हो सो सब मिथ्या हों ।।5।।

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए पंचमे थूलयडे परिग्गहपरिमाणवदे-खेतवत्थूणं, परिमाणाइक्कमणेण वा, धणधण्णाणं परिमाणाइक्कमणेण वा, हिरण्णसुवण्णाणं परिमाणा-इक्कमणेण वा, दासीदासाणं परिमाणाइक्कमणेण वा, कुप्पभांड-परिमाणाइक्कमणेण वा, जो मए देवसियो (राइयो) अइचारो मणसा, वंचिया, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।।6।।

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दूसरी प्रतिमा के अन्तर्गत स्थूल परिग्रह त्यागव्रत में जमीन (क्षेत्र) घर, गाय, बैल प्रभृति धन और गेहूं आदि धान्य, सुवर्ण चांदि, दासी, दास, वस्त्र और भांड (बरतनादि) इत्यादि समस्त परिग्रह के परिमाण का मैंने मन, वचन, काय और कृत, कारित अनु-मोदन से उल्लंघन किया हो अन्य से कराया हो. अन्य के करने में अनुमति दी हो तो उस सम्बन्धी समस्त दोष मिथ्या हों ।।6।।

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए पढमे गुणव्वदे उड्ढवइक्कमणेण वा, अहोवइक्कमणेण वा, तिरियवइक्कमणेण वा, खेत्तवणिएण वा, अन्तराधाणेण वा, जो मए देवसियो (राइयो) अइचारो मणसा, वचिया, काएण कदो वा, कारिदो वा,

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥7॥

अर्थ—हे भगवन्! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। मैंने व्रत प्रतिमा के अन्तर्गत गुणव्रत का प्रथम भेद दिग्व्रत नामक व्रत के पालन करने में ऊर्ध्व दिशा का अतिक्रमण किया हो, नीचे की दिशा का अतिक्रमण किया हो, तिर्यग्दिशा का अतिक्रमण किया हो, क्षेत्र की मर्यादा बढ़ाई हो अथवा मर्यादा का विस्मरण किया हो, इत्यादि अनेक प्रकार के दोष दिवस या रात्रि सम्बन्धी मैंने किए हों या दूसरों से कराये हों अथवा अन्य के करने में अनुमति प्रदान की हो तो वे सब मिथ्या हों ॥7॥

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए-विदिए गुणव्वदे आणयणेण वा, विणिजोगेण वा, सद्दाणुवाएण वा, रूवाणुवाएण वा, पुग्गलखेवेण वा, जो मए दिवसिओ(राइयो) अइचारो मणसा, वचिया, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥8॥

अर्थ—हे भगवन्! मैं अपने व्रत में लगे हुए दोषों की आलोचना पूर्वक पश्चाताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दूसरी प्रतिमा के अन्तर्गत गुणव्रत का दूसरा भेद देश व्रत के पालन करने में, (1) मर्यादा किए हुए क्षेत्र के बाहर से वस्तु मंगाई हो (किसी प्रयोजन से कहीं पर गमन होता है, मर्यादा के बाहर यदि किसी वस्तु को लाने का हमारा अभिप्राय है और वह वस्तु स्वयं न जाकर अन्य से मंगवाई तो मर्यादा के बाहर जाने का प्रयोजन सिद्ध हुआ परन्तु प्रत्यक्ष व्रत भंग के भय से स्वयं गमन नहीं किया इसलिए यह भंगाभंग वृत्तिरूप अतिचार है।) (2) मर्यादा के बाहर वस्तु भेजी हो। (3) कंकर-पत्थर

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

फेंककर अन्य मनुष्य से मर्यादा के बाहर का कार्य किया हो, (4) शब्द आदि की समस्या दिखलाकर कार्य किया हो, (5) अपना रूप दिखाकर मर्यादा बाह्य का कार्य सिद्ध किया हो, इत्यादि अनेक दोष मन, वचन, काय से दिवस या रात्रि में मैंने किए हों, अन्य से कराए हों, अथवा अन्य के करने में अनुमति प्रदान की हो, तो वे सब मिथ्या हों ॥8॥

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए तिदिए गुणव्वदे, कंदप्पेण वा, कुकुवेएण वा, माक्खरिएण वा, असमक्खिया-हिकरणेण वा, भोगोपभोगाणत्थकेण वा जो मए देवसियो (राइयो) अइचारो, मणसा, वचिया, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, सम णुमण्णिदो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥9॥

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दूसरी व्रत प्रतिमा के अन्तर्गत गुणव्रत का तीसरा भेद अनर्थदण्ड-विरति व्रत में राग के उदय से, स्मित हास्य से ठट्ठा की हो, कुत्सित भाषण किया हो, शरीर की खोटी चेष्टा की हो, बिना प्रयोजन बकवास किया हो, व्यर्थ के कार्य किए हों, (प्रयोजन बिना हिंसाजनक व्यापार किया हो) भोगोपभोग की सामग्री का अपेक्षा से बहुत ही अधिक व्यर्थ संग्रह किया हो। इत्यादि अनेक प्रकार के दोष मन, वचन, काय से दिवस या रात्रि में मैंने किए हों, अन्य से कराए हों अथवा किसी के करने पर हर्ष प्रदर्शित किया हो तो वे सब दोष मिथ्या हों ॥9॥

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए पढ़मे सिक्खावदे फासिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, रसणिंदियभोगपरि-माणाइक्कमणेण वा, घाणिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा,

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

चक्खिदियभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, सवणिंदय भोग-परिमाणाइक्कमणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचिया, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥10॥

अर्थ—हे भगवन्! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। व्रत प्रतिमा के अन्तर्गत प्रथम शिक्षा व्रत भोग परिमाण व्रत में स्पर्शन इन्द्रिय, (चर्म इसका गर्म, शीत, हल्का, भारी, रूक्ष, स्निग्ध, कोमल, कठिन) विषय है और इस विषय सम्बन्धी भोग जो एक बार भोगने में आवे ऐसे पदार्थों के परिमाण में) रसना इन्द्रिय (जीभ इसका मिष्ट, कटु, तिक्त, कषैला और खट्टा विषय है इस विषय सम्बन्धी भोग पदार्थों के परिमाण में) घ्राणेन्द्रिय (नाक इसका विषय सुगन्ध तथा दुर्गन्ध इस विषय सम्बन्धी भोग पदार्थों के परिमाण में) चक्षुरिद्रिन्य (आंख-इसका काला, पीला, लाल, सफेद हरित पदार्थ, इस विषय सम्बन्धी भोग पदार्थों के परिमाण में) श्रोत्रेन्द्रिय (कान—इसका विषय आवाज का ज्ञान इस विषय सम्बन्धी भोग पदार्थों के परिमाण) इस प्रकार पांच इन्द्रियों के विषय सम्बन्धी भोग पदार्थों के परिमाण का अतिक्रमण मन, वचन, काय द्वारा दिवस या रात्रि में स्वयं किया हो, अन्य से कराया हो, किसी के करने में भला माना हो, इत्यादि दोष मैंने किए हों तो वे सब मिथ्या हों ॥10॥

गद्य—पडिक्कमामि भंते! वदपडिमाए विदियसिखखावदे फासिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, रसणिंदिय परिभोग-परिमाणाइक्कमणेण वा घाणिंदियपरिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, चक्खिदियपरिभोगपरिमाणइक्कमणेण वा, सवणिंदिय परि-भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अणचारो मणसा, वचिया, काएण कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥11॥

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचनापूर्वक प्रतिक्रमण करता हूं । व्रत प्रतिमा के अन्तर्गत शिक्षाव्रत का तीसरा भेद उपभोग (जो बार-बार भोगने में आवे) परिमाणाव्रत में स्पर्शेन्द्रिय उपभोग परिमाण, चक्षुरिन्द्रिय उपभोग परिमाण और श्रोत्रेन्द्रिय उपभोग परिमाण इस प्रकार पांचों इन्द्रियों के उपभोग सम्बन्धी पदार्थों का अतिक्रमण मन, वचन, काय से किया हो, कराया हो, करने को भला माना हो इत्यादि अनेक दोष दिवस या रात्रि में मुझसे बने हों तो वे सब मिथ्या हों ॥11॥

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए तिदिए सिक्खावदे सचित्तणिक्खेवेण वा, सचित्तपिहाणेण वा, परउवएसेण वा, काला इक्कमणेण वा मच्छरिएण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो मणसा, वचिया, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णि दो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥12॥

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचनापूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं । व्रत प्रतिमा के अन्तर्गत शिक्षाव्रत का तीसरा भेद अतिथि संविभाग नामक व्रत में सचित्त—(जीवनयोनि या जीवोत्पत्ति होने का स्थान) वस्तु में प्रासुक-अचित्त पदार्थ को रखा हो, सचित्त वस्तु से ढका हो, अन्य किसी के प्रतिपादित करने से दिया अथवा अन्य का द्रव्य अपना द्रव्य कहकर दिया हो, दान देने में समय का विच्छेद (लोभ और कलुषित परिणामों के कारण यह भावना की हो कि यह समय व्यापारादि का है इसलिए कौन

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

इस समय आहारादि दान देने जावे।) किया हो, दान देने में अन्य भव्यात्माओं के साथ द्वेष (प्रतिष्ठादि के कारण अर्थात् जो अन्य कोई धर्मात्मा दान करे तो उसके साथ वह विचार कर) किया हो कि इसकी प्रतिष्ठा सर्वत्र होगी और बड़ा अमीर होकर चुप रह गया इसलिए मेरी निन्दा होगी, इत्यादि अनेक प्रकार के दोष, मन, वचन, काय से दिवस या रात्रि में मैंने स्वयं किये हों, अन्य से कराये हों, किसी के करने में सम्मति प्रदान की हो तो वे निरर्थक हों ॥12॥

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए चउत्थे सिक्खावदे-जीविदासंसणेण वा, मरणासंसणेण वा मिथाणुराएण वा, सुहाणुबंधेण वा, णिदाणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचिया, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥13॥

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रत में लगे हुए दोषों की आलोचनापूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। व्रत प्रतिमा के अन्तर्गत शिक्षाव्रत का चौथा भेद समाधिमरणव्रत पालन करने में जीवित रहने की (मैं अभी अधिक जीवित रहा तो अच्छा है? अथवा जीने की आशा से समाधिमरण में शिथिलता करना) आशा रखना, मरण का भय करना, हाय ! मैं मर जाऊंगा क्या ! ऐसे परिणामों से संक्लेशित होना अथवा शीघ्रता से मरण होने की इच्छा रखना ! इष्ट मित्रजनों से प्रेम (राग) करना, पूर्व में भोगे हुए भोगों का स्मरण करना और व्रतादिक पालन कर सांसारिक सुख की इच्छा करना इत्यादि अनेक दोष दिवस या रात्रि में मैंने मन, वचन, काय से किये हों, अन्य से कराये हों, किसी के करने में अनुमति प्रदान की हो तो वे सब दोष निरर्थक हों ॥13॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! समाइय पडिमाए मणदुप्पणि-धाणेण वा, कायदुप्पणिधाणेण वा, अणादरेण वा, सदि अणुव्व-ठाणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो मणसा, वचिया, काएण कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णि दो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥14॥

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचनापूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करने का इच्छुक हूं। तीसरी सामायिक प्रतिमा के पालन करने में मन की स्थिरता न रखी (आर्त्त और रौद्रध्यान पूर्वक मन को अन्य प्रकार चलायमान किया) वचन की स्थिरता (सामायिक पाठ का शुद्ध उच्चारण न कर बकवाद आदि करने से वचन की दुष्टता धारण की) न रखी, शरीर की स्थिरता नहीं रखी हो, एक आसन से स्वस्थतापूर्वक निर्विकार सामायिक नहीं किया, किन्तु शरीर की दुष्टता से अंगोपांग को इधर-उधर चलायमान किया हो) सामायिक के पाठ का विस्मरण किया हो इत्यादि अनेक प्रकार के दोष दिवस या रात्रि में मैंने मन, वचन, काय से किये हों, अन्य किसी के करने में अनुमति प्रदान की हो तो वे सब दोष मिथ्या हों ॥14॥

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! पोसह पडिमाए अप्पडिवेक्खिया-पमज्जियोसग्गेण वा, अप्पडिवेक्खियापमज्जिदाणेण वा, अप्पडि-वेक्खियापमज्जियासंथारोवक्खणेण वा, आवस्सयाणदरेण वा, सदिअणुव्वट्टाणेण वा जो मए देससिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचिया, काएणा कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥15॥

अर्थ—हे भगवन् ! अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचना-

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। चौथीप्रोष-धोपवास नामक प्रतिमा के पालन करने में दृष्टि से जीव-जन्तुओं को न देखकर और प्रमाद से जीव-जन्तुओं का शोधन किये बिना मलमूत्र का क्षेपण किया हो अथवा पूजा के उपकरण आदि वस्तुओं को बिना देखे बिना सोधे ऐसे ही जीव-जन्तु वाली जमीन में रखी हों बिना देखे बिना शोधे उपकरण पुस्तक आदि संयमोपयोगी वस्तुओं को ग्रहण किया हो, बिना देखे बिना शोधे बिस्तर (पथारी) आदि बिछाये हों, षट आवश्यक पालन करने में अनादर किया हो अथवा सामायिक पूजन, स्तवन आदि का पाठ विस्मरण किया हो, इत्यादि अनेक दोष दिवस या रात्रि में मैंने मन, वचन, काय से स्वयं किये हों अन्य से कराये हों, अन्य किसी के करने में अनुमति प्रदान की हो तो वे सब दोष मिथ्या हों ॥15॥

विशेष—गृहस्थों के लिए दोनों प्रकार के षट आवश्यकों का पालन करना चाहिए। समता, वंदना, स्तुति, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय और कायोत्सर्ग इनको आवश्यक कहते हैं अथवा देव पूजा, गुरु की उपासना:, स्वाध्याय, संयम, तप और दान ये भी छह आवश्यक हैं। दोनों प्रकार के आवश्यकों का अभिप्राय परिणामों को सरल और पवित्र रखने का है इसलिए आवश्यक कर्म में अनादर करना व्रत में शिथिलता है।

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! सचित्तविरदिपडिमाए पुढ-विकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आउकाइया जीवा असंखे-ज्जासंखेज्जा, तेउकाइआ, जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाउकाइआ जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदिकाइआ जीवा अणंताणंता, हरिया, बीया अंकुरा छिण्णाभिण्णा एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

मण्णिदो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥16॥

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचनापूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करने का इच्छुक हूं। पांचवीं सचित्तत्याग प्रतिमा के पालन करने में जल-काय के संख्यात अथवा असंख्यात जीव, तेजकाय के संख्यात-असंख्यात जीव, वायुकाय के संख्यात-असंख्यात जीव, पृथ्वीकाय के संख्यात;असंख्यात जीव, और वनस्पतिकाय के अनन्तानन्त जीव, हरितकाय के जीव, हरित अंकुर, बीज, कंदमूल आदि के जीव और साधारण वनस्पति के जीवों को छेदन किया हो, भेदन किया हो, प्राणों का घात किया हो, पांव (पग) आदि से कुचल दिये हों, त्रास दिया हो, पीड़ा की हो, और उनकी विराधना की हो इत्यादि अनेक दोष मैंने मन, वचन, काय से स्वयं किये हों, अन्य से कराये हों, किसी अन्य के करने में सहमत हुए हों तो वे सब दोष मिथ्या होवें ॥16॥

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! राइभत्तपडिमाए णवविह बंभ-चरियस्स दिवा जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचिया, काएण कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥17॥

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचनापूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करने की इच्छा करता हूं। षष्ठी दिवा-मैथुन त्याग नामक प्रतिमा के पालन करने में नव प्रकार स्त्रियों के विषय की अभिलाषा, लिंग विकार, घृत, दुग्धादि, पुष्टरस त्याग, स्त्री, पशु, नपुंसक, विट और सप्त विषयों के लोलुप मनुष्यों के आश्रित वसतिका का त्याग, स्त्रियों के मनोहर अंग निरीक्षण का त्याग, स्त्रियों का बुरी

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

भावना से आदर-सत्कार का त्याग, अपनी पूजा-प्रतिष्ठा के श्रवण का त्याग, अंग-श्रृंगार का त्याग, संगीत नृत्य वादित्र इत्यादि सम्बन्धी अनेक दोष दिवस या रात्रि में मैंने मन, वचन, काय से स्वयं किये हों, अन्य से कराये हों, किसी अन्य के करने में भला माना हो तो वे सब दोष मिथ्या होवें ॥17॥

विशेष—इस प्रतिमा का नाम 'रात्रिभुक्ति त्याग' भी है इस लिए चारों प्रकार के आहार में मोह किया हो, पूर्व भोगे हुए रसों का स्मरण किया हो, निदान किया हो और रसों को न भोगते हुए भी मैं रस भोग रहा हूं, ऐसा अनुभव किया हो इत्यादि दोष मैंने स्वयं किए हों, अन्य से कराये हों, किसी के करने पर सम्मति दी हो तो वे सब मिथ्या होवें ॥

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! बंभपडिमाए इत्थिकहायत्तणेण वा, इत्थिमणोहरांगनिरिक्खिणेण वा, पूव्वरयाणुस्मरणेण वा, कामकोवणरसासेवणेण वा, सरीरमंडणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचिया, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णि दो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥18॥

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचनापूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। सातवीं ब्रह्मचर्य प्रतिमा के पालन करने में स्त्रियों की मनोहर कामोत्पादक कथा की हो, काम दृष्टि से स्त्रियों के गुह्य मनोहर अंगों का निरीक्षण किया हो, पूर्वकाल में भोगे हुए विषयों का स्मरण कर मन को विकारित किया हो, कामोत्पादक पुष्ट रसों का सेवन किया हो, स्त्रियों को आसक्त करने वाला शरीर का श्रृंगार किया हो, इत्यादि अनेक प्रकार का दोष मैंने दिवस या रात्रि में मन, वचन, काय से किया हो, अन्य से कराया हो,

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

किसी अन्य के करने में सहमति प्रदान की हो तो वे सब मिथ्या होवें ।।18।।

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! आरम्भविरदिपडिमाए कसाय-वसंगएण, जो मए देवसियो (राइयो) आरम्भो, मणसा, वचिया, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।।19।।

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचनापूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। आठवीं आरम्भ त्याग प्रतिमा के पालन करने में क्रोध, मान, माया, लोभ और मोह आदि कषायों के वश गृह कार्यों सम्बन्धी आरम्भ दिवस या रात्रि में मैंने मन, वचन, काय से किया हो, अन्य से कराया हो, अन्य किसी के करने में अनुमति प्रदान की हो तो वे सब मेरे मिथ्वा होवें ।।19।।

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! परिग्गहविरदिपडिमाए वत्थमेत्त परिग्गहादो अवरम्मि परिग्गहे मुच्छापरिणामे जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो मणसा, वचिया, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो -वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।।20।।

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचनापूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। नवमी परिग्रह त्याग प्रतिमा के पालन करने में, वस्त्र मात्र परिग्रह के सिवाय अन्य परिग्रह में मूर्छा की हो, तो उस सम्बन्धी दिवस या रात्रि में मन, वचन, काय से और कृत, कारित, अनुमोदन से किये हुए दोष मिथ्या होवें ।।20।।

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! उद्दिट्ठविरदिपडिमाए जंकिपि अणुमणणं पुट्ठापुट्ठेण कदं वा, कारिदं वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।।21।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतों में लगे हुए दोषों को आलोचना करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दशवीं अनुमति विरति प्रतिमा के पालन करने में अन्य के पूछने पर अथवा बिना पूछे भी यदि गृह-कार्यों में कुछ अनुमति दी हो तत्सम्बन्धी मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदन दिवस या रात्रि में किये हुए समस्त दोष मिथ्या हों ।।21।।

गद्य—पडिक्कमामि भंते ! उद्दिट्ठविरदिपडिमाए उद्दिट्ठदोसबहुलं अहोरदियं आहारयं वा आहाराविय वा आहारिज्जंतं वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।।22।।

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतों में लगे हुए समस्त दोषों की आलोचनापूर्वक पश्चात्ताप करता हूं। ग्यारहवीं उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा के पालन करने में उद्दिष्ट दोष से दूषित आहार स्वयं सेवन किया हो, अन्य को उद्दिष्ट दोष सहित आहार कराया हो उद्दिष्ट दोष दूषित आहार करने में सम्मति प्रदान की हो, तत्सम्बन्धी जो दोष मन, वचन, काय से मुझसे हुए हों तो वे सब मिथ्या हों ।।22।।

निर्ग्रन्थ पद की वांछा

इच्छामि भंते ! इमं णिग्गंथं पावयणं अणुत्तरं केवलियं णेगाइयं सामाइयं संसुद्धं सल्लघत्ताणं सल्लघात्तणं, सिद्धिमग्गं, सेढीमग्गं मोत्तिमग्गं पमोत्तिमग्गं मोक्खमग्गं णिज्जाणमग्गं णिव्वाणमग्गं सव्व दुःखपरिहाणिमग्गं सुचरियपरिणिव्वाणमग्गं अवितहमविसंति पव्वयणमुत्तमं तं सद्दहामि तं पत्तियामि तं रोचेमि तं फासेमि इदो उत्तमं अण्णं णत्थि ण भूदं ण भवं ण भविस्सदि णाणेण वा दंसणेण वा चरित्तेण वा सुत्तेण वा इदो जीवा सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिणिव्वाणयंति सव्वदुःखा-

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

णमंतं करंति परिवियाणंति समणोमि संजदोमि उवरदोमि उवसंतोमि उवधिणियदिय माण माया मोसमूरण मिच्छणाण मिच्छदंसण मिच्छचरित्तं च पडिविरदोमि सम्मण्णाण सम्मदंसण सम्मचरित्तं च रोचेमि जं जिणवरेहिं पण्णत्तो इत्थ मे जो कोई देवसिओ (राइयो) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥23॥

अर्थ—हे भगवन् ! मैं निर्ग्रन्थ पद की इच्छा करता हूं। जब तक मेरा संसार से सम्बन्ध है तब तक भव भव में यह त्रिजगत्-पूज्य और मंगल लोकोत्तम शरणभूत निर्ग्रन्थ पद (समस्त परि-ग्रहादि रहित परम दिगम्बर अवस्था) बार-बार मिले।

बाह्य और अभ्यन्तर समस्त परिग्रह रहित लोकोत्तर (मोक्ष मार्ग का साक्षात् चिह्न, निर्ग्रन्थ लिंग सिवाय अन्य किसी भी लिंग से मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है। इसलिए निर्ग्रन्थ पद पर लोकोत्तर है।) केवल ज्ञान का उत्पादन रत्नत्रय का बीज, सर्व सावद्य रहित, परम उदासीनता का कारणभूत, आलोचना-प्रायश्चित-निरतिचारता, प्रतिक्रमण आदि गुणों से परम विशुद्ध, माया, मिथ्या निदान इस प्रकार शल्यत्रय रहित, आत्मसिद्धि का प्रधान मार्ग, उपशमक्षयोपशमादि श्रेणियों का साक्षात् मार्ग, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, काम और व्यामोहादि समस्त विकार रहित, होने से सर्वोत्तम निर्भय, परमात्म प्राप्ति का प्रत्यक्ष मार्ग, त्याग का मार्ग, मोक्ष मार्ग, उत्कृष्ट पद का मार्ग, संसार के परिभ्रमण अपहारक-निर्दोष मार्ग, निर्वाण का मार्ग, सर्व दुःखों के नाश करने का मार्ग, उत्तम सदाचार के उत्पन्न करने का मार्ग, अबाधित मार्ग, स्वतन्त्रता का मार्ग, निर्भयता का मार्ग, सर्व सुखों का मार्ग और सर्वोत्कृष्ट मार्ग ऐसा निर्ग्रन्थ पद है।

मैं उक्त सर्वोत्कृष्ट निर्ग्रन्थ पद को विशुद्ध भावों से श्रद्धान

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

करता हूं, और संशयादि समस्त विकार रहित शुद्ध निश्चय से चाहता हूं, विशुद्ध भावों से निश्चय रूप मानता हूं, विश्वास करता हूं, सहृदय पूर्वक स्वीकार करता हूं, अनन्य भावना से प्रेम करता हूं। भक्तिभाव से स्पर्श करता हूं, पवित्र भावों से धारण करता हूं। इस निर्ग्रन्थ पद के सिवाय और दूसरा कोई भी उत्तम नहीं है। पहले भी कोई नहीं था और न भविष्य में कोई इसके समान होगा सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यकचारित्र और सम्यक-आगम से यह निर्ग्रन्थ पद सर्वोत्कृष्ट है, इसके धारण करने से ही जीव मोक्ष मार्ग में प्रविष्ट होंगे। सिद्ध पद को प्राप्त होंगे। समस्त कर्म रहित सर्वथा मुक्त होंगे अर्थात् फिर कभी संसार के बंधन को नहीं प्राप्त होंगे, इसी निर्ग्रन्थ पद से निर्वाण पद को प्राप्त होंगे सर्व दुःखों का नाश करेंगे। समस्त जीवादि तत्त्वों के ज्ञाता होंगे। मै इस महान निर्ग्रन्थ पद को धारण करने की भावना करता हूं और उसकी प्राप्ति के लिए संयम आराधना करता हूं। विषयों कषायों से उपशान्त होता हूं, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, मात्सर्य, द्वेष, राग, काम, भय, प्रपंच और समस्त व्यामोह को छोड़ता हूं। हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह का त्याग करता हूं मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र से सर्वथा विरक्त हो गया हूं। अब मैं सदा के लिए इनका परित्याग करता हूं। और सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र का श्रद्धान करता हूं। जो जिनेन्द्र भगवान ने कहा है वह सत्य है, प्रमाणित है, निश्चय है, अवाधित है। उसका मैं विश्वास करता हूं, श्रद्धान करता हूं। इस विषय में मुझसे जो कुछ अतिचार, अनाचार हुए हों तो वे सब मिथ्या हों।

विशेष—देवसीउ 36, राउ 18 और चउमासिउ सांवच्छरिओ 108 अर्थात् दैवसिक मौतें क्रमण में 36 रात्रिक में 18 चातुर्मासिक सांवत्सरिक में 108 बार णमोकार मन्त्र पढ़कर जाप्य दें।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

गद्य—इच्छामि भंते ! वीरभत्तिकाउस्सग्गं करेमि जो मए देवसिओ (राइउ चउमासिउ सावच्छरिउ) अइचारो अणाचारो आभोगो, अणाभोगो, काइओ, वाइओ माणसिओ दुच्चरिओ दुच्चारिओ दुब्भासिओ दुप्परिणामिओ दुस्समिणिउ णाणे दंसणे चरित्ते सुत्तो समाइए एयारसण्हं पडिमाणं विराहणाए अट्ठविहस्स कम्मस्स णिग्घादणाए अण्णहा उस्सासिदेण, वा णिस्सासिदेण वा, उम्मिसिदेण वा णिमिस्सिदेण वा खासिदेण वा छिंकिदेण वा जंभाईदेणवा, सुहुमेहिं अंगचलाचलेहिं, दिट्ठिचलाचलेहिं एदेहिं सव्वेहिं, असमाहिं पत्तेहिं आयारेहिं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि। दंसणवय सामाइय पोसह, सचित्त राइ भत्तेय ।वंभारंभ परिग्गह अणुममुमुद्दिट्ठ देवविरदेदे ॥1॥

एयासु यथा कहिद पडिमासु देवसिओ (राइयो) पमादाइकया इच्चार सोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं होउमज्झं ।

अरहन्त सिद्ध आइरिय उवज्झाय सव्वसाहु सक्खियं सम्मत्त पुव्वगं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु, मे भवदु, मे भवदु । देवसिय (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाइचार विसोहिणिमुमित्तं पुव्वायरियकम्मेण निष्ट्ठतकरण वीरभक्तिकायुस्सग्गं करेमि ॥2॥

('णमो अरहन्ताणं' यहां से प्रारम्भ कर 'यावंति जिन चैत्यानि' इस श्लोकपर्यन्त पढ़कर पुनः नव बार णमोकार मन्त्र की जाप्य देना चाहिए। अर्थात् दिवस सम्बन्धी प्रतिक्रमण में 36 बार णमोकार की जाप देना उसी प्रकार ऊपर लिखित नियम से रात्रि सम्बन्धी प्रतिक्रमण में 18 बार णमोकार की जाप करना चाहिए।

अर्थ—हे भगवन् ! मैं वीर प्रभु की भक्ति करने का इच्छुक हूं और इसके लिए मैं इस विनाशीक शरीर से समत्व भाव छोड़ता हूं। दिवस में (रात्रि में) आवश्यक क्रियाओं के करते

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हुए मैंने आलस्य किया हो, व्रतादिकों को भंग किया हो, उनमें अतिचार लगाये हों, शिथिलता धारण की हो, मन में ग्लानि उत्पन्न की हो, प्रकट रूप दंभवृत्ति से व्रत पालन किए हों, लज्जा के लिए एकदम अपने को छुपाकर आचरण किए हों, मन, वचन और शरीर की दुष्टता से व्रतों का पालन किया हो, वीभत्स उच्चारण पर कार्य किया हो, राग, द्वेष, अज्ञान, और प्रमाद से विनय रहित उद्दण्डता से व्रतों का पालन किया हो, अपशब्द कहकर महत्त्वता बतलाई हो, कुत्सित परिमाणों (बुरे भावों) से कार्य किया हो बुरे स्वप्न में दोष उत्पादन किया हो, सम्यग्दर्शन, ज्ञानचारित्र और जिनागम की विराधना की हो, प्रतिमाओं की विराधना की हो, इत्यादि अनेक दोष मुझसे बने हों, वे सब मिथ्या होवें।

आठ कर्मों को नाश करने वाली क्रियाओं के प्रयत्न करने में (सामायिक, प्रतिक्रमण, ध्यान, तप, पूजा और स्वाध्याय ये सब कर्मों के नाश करने के कारण हैं) श्वासोश्वास से, नेत्रों की टमकार से, खांसने से, छींकने से, जंभाई लेने से, सूक्ष्म अंगों के हिलाने मे, आंगीपांग के फेंकने से, दृष्टिदोष से इत्यादि समस्त क्रियाओं से सूत्रपाठ आदि क्रियाओं का विस्मरण किया हो, अविनय की हो, प्रमाद और अज्ञान से अन्यथा प्ररूपण की हो तो मैं इस प्रतिक्रमण के समय वीर भगवान की भक्तिरूप कायोत्सर्ग धारण करता हूं। और तब तक पाप कर्मों को सर्वथा छोड़कर शरीर से भी ममत्व त्याग करता हूं।

वीर प्रभु का स्तवन

सर्वाणि चराचराणि विधिवद्द्रव्याणि तेषां गुणान्।
पर्यायानपि भूतभाविभवतः सर्वान् सदा सर्वथा।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

जानीते युगपत्प्रतिक्षणमतः सर्वज्ञ इत्युच्यते,
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः ॥1॥

अर्थ—जो समस्त चराचर पदार्थों को तथा समस्त द्रव्य और उनकी कालत्रयवर्ती समस्त यार्यायों को एक साथ प्रतिक्षण सदैव जानता है उसको सर्वज्ञ कहते हैं। वीर भगवान सर्वज्ञ हैं, वीतराग हैं और महान् पूज्य जिनेश्वर हैं इसलिए वीर प्रभु को नमस्कार है।

वीरः सर्व सुरासुरेन्द्रमहितो, वीरं बुधाः संश्रिताः
वीरेणाभिहितः स्वकर्मनिचयो वीराय भक्त्या नमः।
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं, वीरस्व वीरं तपो,
वीरे श्रीधृतिकर्तिकांति निचयो, हे वीर भद्रं त्वयि ॥2॥

अर्थ—हे वीर प्रभो! आपकी समस्त इन्द्र पूजा करते हैं। विज्ञ गणधरादिक आपकी सेवा करते हैं। और आपने समस्त कर्मों को नष्ट कर दिया है इसलिए हे वीर! आपको नमस्कार है। धर्म तीर्थ आपसे इस कलिकाल में चल रहा है, आप घोर तप धारण करने वाले पर योगी हैं, आप में श्री, कांति, कीर्ति आदि सर्व गुणों का वास है अतएव आप कल्याण भागी हों ॥2॥

ये वीरयादौ प्रणमंति नित्यं, ध्यानस्थिताः संयमयोगयुक्ताः।
ते वीतशोका हि भवन्ति लोके, संसारदुर्ग विषमं तरंति ॥3॥

अर्थ—जो मनुष्य संयम को धारण कर और ध्यान में लीन होकर वीर प्रभु को नरस्कार करता है वह समस्त शोक से रहित होकर संसार समुद्र के पार हो जाता है।

चारित्र स्तवन

चारित्रं सर्व जिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्वशिष्येभ्यः।
प्रणमामि पंचभेदं पंचमचारित्रलाभाय ॥6॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अर्थ—सदाचार जिनेन्द्र भगवान् ने स्वयं पालन किया है और समस्त जीवों के उपकार के लिए सब को बतलाया है। ऐसे पंच-भेदरूपी चरित्र को उत्तम चारित्र की प्राप्ति के लिए नमस्कार करता हूं।

विशेष—1. सामायिक 2. छेदोस्थापना 3. परिहारविशुद्धि 4. सूक्ष्मसांपराय और 5. यथाख्यात ये चारित्र में पांच भेद हैं। इनमें साक्षात्मोक्ष का कारण यथाख्यात चारित्र है।

व्रतसमुदयमूलः संयमास्कंधबंधो, यमनियमपयोभिर्वर्द्धितः शीलशाखः। समितिकलिकभारो, गुप्तिगुप्तप्रवालो, गुणकुमुम-सुगंधिः सत्तपश्चित्रपत्रः ॥2॥

शिवसुखफलदायी यो दयाछाययौघः, शिवमगपथिकानां खेद नोदे समर्थः दूरितरविजतापं, प्रापयन्नंतभावं, स भवविभवहान्यै नोस्तु चरित्रवृक्षः ॥3॥

भावार्थ—जिसका व्रत समुदाय मूल है, संयम स्कंध (तना) है, यम और नियम रूप जल में संवर्द्धित है, शील ही जिसकी शाखाएं हैं, 5 समिति रूपी कलिकाओं के भार से जो नत हो रहा है (झुका हुआ है) गुप्तियां रूप प्रवाल (रत्न) जिसमें गुप्त रूप से विद्यमान हैं, नाना गुग रूपी कुसुमों से जो सुगन्धित है, उत्तम द्वादस तप रूप विचित्र पत्रों से सुशोभित है तथा भव्य जीवों को शिव-सुख रूप उत्तम फल को प्रदान करने वाला है, दया रूपी विस्तृत छाया से युक्त है, मुक्ति मार्ग के यात्रियों को आश्रय दे-कर उनके खेद को दूर करने वाला है पापों के संताप को निरस्त कर संसार परिभ्रमण को नष्ट कर देता है ऐसा सम्यक्चारित्र रूपी-वृक्ष हम सबको शरण प्रदान करे ॥2-3॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

धर्म महात्म्य

धम्मो मंगलमुद्दिट्ठं, अहिंसा संजमो तवो ॥
देवा वि तस्स पणमंति, जस्स धम्मे सयामणो ॥1॥

अर्थ—धर्म समस्त मंगलों से प्रधान मंगल है, अहिंसा, धर्म और तप ये धर्म के रूप हैं। जो मनुष्य धर्म को पवित्र हृदय से धारण करता है उसको देवता भी नमस्कार करते हैं ॥5॥

धर्मः सर्वसुखाकरो, हितकरो, धर्मबुधाश्चिन्वते,
धर्मेणैव समाप्यते शिवसुखं, धर्माय तस्मै नमः।
धर्मान्नास्त्यपरः सुहृद्भवमृतां, धर्मस्य मूलं दया,
धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं, हे धर्म ! मां पालय ।2।

अर्थ—धर्म का मूल दया है, धर्म को विद्वान् गणधरादिक मुनीश्वर धारण करते हैं, धर्म से सर्व सुखों की प्राप्ति और कल्याण होता है। धर्म सेवन करने के मोक्ष की प्राप्ति होती है। धर्म ही जगत् का बन्धु है इसलिए धर्म सेवन करने में अपना चित्त लगाता हूं। हे धर्म मेरी रक्षा कर ! ।3।

इच्छामि भन्ते ! पडिकमणाइचारमालोचेउं तत्थ देसासिआ असणासिआ आथाणसिआ कालासिआ मुद्दासिआ काउसग्गासिआ पणमासिआ आवत्तसिया पडिक्कमणाए तत्थसु आवास एसु परिहीणदा जो मए अच्चासणा मणसा, वचिया, काएण, कदो वा-कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्समिच्छामि दुक्कडं॥9॥ दंसण वद सामाइय पोसह सचित्तरायभत्ते य, बंभारम्भ परिग्गह अणुमणमुद्दिट्ठ देसविरदेदे। एयासु यथा कहिद पडिमासु पमादाकयाइच्चारसौहणटठंबेदोवटठवेणं अरहन्त सिद्ध आइरिय उवज्झाय सव्वसाहु सक्खियं सम्मतपुव्वगं दिढव्वदं, समारोहियं, मे भवदु 3 अथ देवसिय राइय पडिक्कमणाए सव्वाइचारविसोहिणिभित्तं पुव्वायरियकम्मेण चउवीसतित्थयरभत्ति काउसग्गं

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

करेमि ।।

अर्थ—हे भगवन् ! अन्त में अब प्रतिक्रमण में लगे हुए दोषों की आलोचना करता हूं। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावों को अनुकूल योग्यता नहीं मिलने से देश, आसन, स्थान, काल, मुद्रा, कायोत्सर्ग श्वासोच्छ्वास, नमस्कारादि विधि और स्तुति आदि क्रिया में शीघ्रता के लिए, छह आवश्यक कर्मों के करने में, कुछ भी हीनता प्राप्त हुई हो, अथवा प्रमाद और अज्ञान से जिन दोषों की (मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदन द्वारा) प्राप्ति हुई हो तो वे सब मिथ्या हों।

इस प्रकार दोषों की शांति के लिए चौबीस तीर्थंकर भक्ति व कायोत्सर्ग धारण करे। णमोकार मन्त्र 9 बार पढ़कर जाप देवें।

'णमो अरिहन्ताणं' से प्रारम्भ कर 'यावन्ति जिन चैत्यानि' इस श्लोकपर्यन्त पाठ पढ़ना चाहिए और कायोत्सर्ग धारण करना चाहिए।

चतुर्विंशति तीर्थंकर वंदना

चउवीसं तित्थयरे, उसहाई वीर पच्छिमे वंदे।
सव्वेसिं गुणगणहर, सिद्धे सिरसा णमंस्सामि ।।1।।

अर्थ—प्रथम ऋषभदेव को आदि लेकर वीर प्रभु पर्यन्त चौबीस तीर्थंकर, गणधर और सिद्ध परमेष्ठी को नमस्कार करता हूं।

ये लोकेऽष्टसहस्रलक्षणधरा, ज्ञेयार्णवांतर्गता,
ये सम्यक्भवजालजहेतुमथनाश्चन्द्रार्कतेजोधिकाः।
ये साध्विन्द्रसुराप्सरोगणशतैर्गीतप्रणुत्यर्चितास्
तान् देवान् ऋषभादिवीरचरमान्, भक्त्यानमस्याम्यहम्।।2।।

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

अर्थ—समस्त ज्ञेय पदार्थों के ज्ञाता एक हजार आठ शुभ लक्षणों से विराजमान, संसार के बंधन को नाश करने वाले, करोड़ों सूर्य और चन्द्रमा से भी अधिक तेजस्वी, मुनीश्वर, नरेन्द्र और देवेन्द्र से पूज्य ऐसे ऋषभादि चौबीस तीर्थंकरों को नमस्कार करता हूं ॥2॥

नाभेयं देवपूज्यं जिनवरमजितं, सर्वलोकप्रदीपं।
सर्वज्ञं संभाख्यं मुनिवृषभं नंदनं देवदेवं ॥
कर्मारिघ्नं सुबुद्धि वरकमलनिभं, पद्मपुष्पाभिगंदं।
ज्ञातं दांतं सुपार्श्वं सकलशशिनिभं चंद्रनामानमीडे ॥3॥
विख्यातं पुष्पदंतं भवभवमथनं, शीतलं लोकनाथं।
श्रेयांसं शीलकोशं प्रवरनगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यं।
मुक्तं दांतेन्द्रियाश्वं विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं मुनीन्द्रं।
धर्मं सद्धर्मकेतुंशमदमनिलयं स्तौमि शांतिं शरण्यं ॥4॥
कुंथुं सिद्धालयस्थं श्रमणपतिमरं, त्यक्तभोगेषु चक्रं।
मल्लिं विख्यातगोत्रं, खचनगुणनुतं ब्रनुतं सौख्यराशिं।
देवेन्द्रार्च्यं नमीशं, हरिकुलतिलकं नेमिचन्द्रं भवान्तं।
पार्श्वं नागेन्द्रवन्द्यं, शरणमहमितो वर्द्धमानं च भक्त्या ।5॥

भावार्थ—1. ऋषभ 2. अजित 3. संभव 4, अभिनन्दन 5, सुमति 6, पद्मप्रभ 7. सुपार्श्व 8. चन्द्रप्रभ 9. पुष्पदन्त 10. शीतलनाथ 11. श्रेयांसनाथ 12. वासुपूज्य 13. विमलनाथ 14. अनन्तनाथ 15. धर्मनाथ 16. शांतिनाथ 17, कुन्थुनाथ 18. अरहनाथ 19. मल्लिनाथ 20. मुनिसुव्रत 21. नमिनाथ 22. नेमिनाथ 23. पार्श्वनाथ 24. महावीर इस प्रकार चौबीस तीर्थंकर हैं, मैं इनकी शरण लेता हूं।

(णमोकार मन्त्र 9 बार 27 श्वासोच्छ्वास में जाप्य)

गद्य—इच्छामि भन्ते ! चउवीसतित्थयर भत्तिकाउसग्गो कओ, तस्यालोचेउं, पंच महाकल्लाणसंपण्णाणंअ ट्ठ महापाडि-

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हेर सहियाणं चउतीस अतिशय विशेष संजुत्ताणं, बत्तीस देविंद मणि मउड मत्थय महियाणं, बलदेव वासुदेव चक्कहर रिसि मुणि जय अणगारोवगूढाणं, थुइसय सहस्स णिलयाणं उसहाइ वीर पच्छिम-मंगल-महापुरिणाणं, णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वन्दामि, णमंस्सामि, दुक्खअक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइमणं, समाहिमरणं जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं। दंसणु वय सामाइय, पोसह सचित्तराय भत्तेय। बम्भारम्भ परिग्गह, अणुमणमहिठ देसविरदेदे। एयासु यथा कहिद पडिमासु पमादाकया-इचार सोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं अरहन्त सिद्ध आइरिय उवज्झाय सव्वसाहु सक्खियं, सम्मत पुव्व गं, दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु मे भवदु मे भवदु। अथ देवसिय (राइय) पडिक्कमाणाए-सव्वाइ-चार विसोहिणिमित्तं, पव्वायरिय कमेण आलोयण सिद्धभत्ति-पडिक्कमणभत्ति णिट्ठिदकरण वीरभत्ति चउवीस-तित्थयरभत्ति कत्वा तदीनाधिकत्वादि-दोषपरिहारार्थ सकलदोषनिराकरणार्थ सर्वमला तिचारविशुद्धयर्थं आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्ग करोमि।

अर्थ—हे भगवन्! मैं समस्त दोषों को दूर करने के लिए चौबीस तीर्थंकरों की भक्ति रूप कायोत्सर्ग धारण करता हुआ अपने कृत कर्मों की आलोचना करता हूं।

महान् कल्याणकों से सुशोभित, अष्ट महा प्रातिहार्य सहित, चौंतोस अतिशय सहित बत्तोस प्रकार के देवेन्द्रों के मस्तकों में लगी हुई मणियों से पूज्य बलभद्र, वासुदेव, चक्रवर्ती, रुद्र, ऋषि, मुनीश्वर, यति, अनगार आदि महापुरुषों के शिरोवंद्य, देवेन्द्रों-कर सतत् वन्दनीय ऋषभदेव से प्रारम्भ कर वीर भगवान पर्यन्त चौबीस तीर्थंकर महामंगल के करने वाले हैं, पुण्य पुरुष हैं उनकी मैं त्रिकालवन्दना करता हूं, स्तवन करता हूं, पूजा करता हूं, नमस्कार करता हूं, चौबीस भगवान की भक्ति से दुःखों का

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

नाश हो, कर्मों का नाश हो, रत्नत्रय की प्राप्ति हो, शुभ गति हो समाधिमरण और श्री जिनेन्द्रदेव के गुणों की प्राप्ति हो । दर्शनादि प्रतिमा में सर्व दोषों की विशुद्धि के लिए पूर्व आचार्यों की परिपाटी के अनुकूल अपने समस्त कृत कर्मों की आलोचनापूर्वक श्री सिद्ध प्रतिक्रमण भक्ति, वीर भक्ति और चौबीस तीर्थंकर भक्ति करने पर विशेष दोषों की शुद्धि के लिए समाधि भक्ति कायोत्सर्ग धारण करता हूं । अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्वसाधु की साक्षीपूर्वक सम्यग्दर्शन सहित उत्तमोत्तम व्रतों का समारोह मेरे हृदय मन्दिर में हो ।

(**विशेष**—अशोक वृक्ष, पुष्प-वृष्टि, दिव्य-ध्वनि, चामर, भामण्डल, छत्रत्रय, सिंहासन और दुन्दुभि बाजों का बजना, ये आठ प्रातिहार्य हैं ।)

दश जन्म के दश केवलज्ञान और चौदह देवकृत इस प्रकार चौंतीस अतिशय अरहन्त भगवान के होते हैं ।

(यहां 9 बार णमोकार मन्त्र 27 श्वासोच्छ्वास में पढ़ना चाहिए ।)

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः,
सदवृत्तानां गुणगणकथा, दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो, भावना चात्मतत्त्वे,
संपद्यंतां मम भव भवे, यावतेऽपवर्गः ॥1॥

अर्थ—जैनागम (जिन सिद्धान्त शास्त्रों) का अयभस, श्री जिनेन्द्रदेव की भक्तिपूर्वक वन्दना, सदाचारधारी जैन यति, ब्रह्मचारी, ऐल्लक और विद्वान महात्माओं का संग, श्री जिनेन्द्र देव प्रभृति पुण्य पुरुषों की कथा का श्रवण, दूसरों की निंदा का त्याग, दूसरों के तिरस्कार में मौन, समस्त जीव मातृत्व प्रेम प्रिय, हित वचन और आत्म-तत्त्व की भावना इतनी वस्तुओं का समागम जब तक मोक्ष की प्राप्ति न हो तब तक भव-भव में नित्य

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

होता रहे ॥1॥

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनं।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥2॥

अर्थ—हे जिनेन्द्रदेव ! आपके पवित्र चरण कमल जब तक मुझे मोक्ष की प्राप्ति न हो तब तक मेरे हृदय मन्दिर में विराजमान रहो और मेरा हृदय आपके चरण कमलों में लीन रहे ॥2॥

अक्खरपयत्थहीणं, मत्ताहीणं च जं मये भणियं ।
तं खमउ णाणदेव य, नज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु: ॥3॥

अर्थ—हे जिन शासन (जिनागम) देव ! मैंने अक्षर मात्रा रहित जो कुछ अशुद्ध उच्चारण किया हो सो क्षमा करो और मेरे दुःखों का नाश वरो ॥3॥

दुक्खक्खज्ञ वम्मक्खउ, बोहिलाहो सुगइगमणं ।
सम्मं समाहिमरणं जिणगुण संपत्ति होउमज्झं ॥4॥

अर्थ—हे भगवान् ! मेरे दुःखों का नाश हो , कर्मों का नाश हो, रत्नत्रय की प्राप्ति हो, सुगति गमन हो, सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हो, समाधिमरण हो और श्री जिनराज के गुणों की प्राप्ति हो, ऐसी मेरी भावना है ॥4॥

गद्य—इच्छामि भन्ते ! इरियावहियस्स आलोचेउ पुव्वुत्तर दक्खिण पच्छिम चउदिसु विदिसासु विहरमाणेण जगुंतर दिट्ठिणदा दट्ठवा डवडवचरियाए, पमाददोसेण पाणभूद जीव-सत्ताणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिद तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

(9 बार णमोकार मंत्र की जाप और आवत चारों दिशा में एवं प्रणुति ।)

॥ इति श्रावक प्रतिक्रमण ॥

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

आचार्य रत्न 'योगीन्द्र चूड़ामणी' सुमतिसागर जी महाराज कूचा सेठ, दिल्ली में वर्षायोग में स्थापित

साधु संघ की सूची 1988

आचार्य श्री 108 सुमतिसागर जी महाराज

मुनि श्री 108 महेन्द्र सागर जी ,,

,, ,, बाहुबली सागर ,,

,, ,, घवल सागर ,,

,, ,, गुण सागर ,,

,, ,, समता सागर ,,

आर्यिका श्री 105 ज्ञानमती माता जी

,, ,, विद्यामती माता जी

,, ,, सिद्धमती माता जी

,, ,, दयामती माता जी

बा० ब्र० आर्यका श्री 105 कितींमती माता जी

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

आर्यिका श्री 105 शान्तीमती माता जी

आर्यिका श्री 105 वीरमती माता जी

एलक श्री 105 पद्म सागर जी

क्षुल्लक ,, नेमी सागर जो

,, ,, कीर्तिधर जी

,, ,, नय सागर जी

,, ,, शीतल सागर जी

,, ,, वीर सागर जी

एल्लिका श्री 105 आदिमती जी

,, ,, वीरमती जी

ब्रह्मचारी सुशीलाबाई

ब्रह्मचारी

ब्रह्मचारिणी

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.

Digitized by Madhuban Trust, Delhi

हिन्दी एवं अंग्रेजी पुस्तक, मैगजीन की
सुन्दर एवं स्वच्छ छपाई के लिए एक
बार अवश्य सेवा का अवसर दें।

पारस प्रिंटर्स

: सहयोगी संस्था :

अरिहंता प्रिंटर्स

1/11956 बी, उलधनपुर, नवीन शाहदरा,
दिल्ली-110032

CC-0. Shri Vipin Kumar Col. Deoband. In Public Domain.